अक्टूबर 2017 वर्ष 45 अंक 10 कवर सहित पृष्ठ 68 ₹ 40

युवादृष्टि

संस्कारों की सुवास
बच्चों में हो उजास

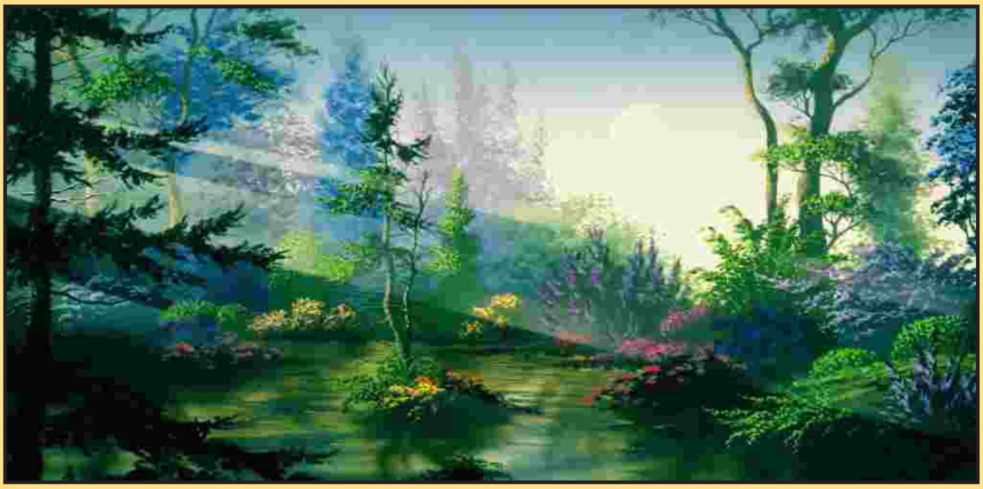

संप्रदाय लिफाफा, छिलका और शरीर की भाँति है,
जबकि धर्म पत्र फल और आत्मा की भाँति होता है।

आचार्य महाश्रमण

श्रद्धानिष्ठ श्रावक

एच. अनराज जी गादिया

1951–2008

(चेन्नई व गादाणा)

आपकी संघीय श्रद्धा-भक्ति, सामाजिक उदारता
एवं कर्मठ-कर्तृत्वशीलता हमारी सतत प्रेरणा

श्रीमती सुशीलाबाई अनराजजी गादिया
श्रीमती रेखा एवं ए. निर्मल गादिया
&
Deccan Group of Companies

शुभ संस्कारों से सम्पोषित जीवन मंगलमय हो।
ज्ञानार्थी की जय हो।।

पढ़ें ज्ञानशाला में जैन धर्म के सिद्धान्तों को।
पाएँ पूत प्रेरणा पढ़-सुन प्रेरक वृत्तान्तों को।
सम्यग्दर्शन संयुक्त चिन्तन, नहीं कहीं दुर्नय हो।।

पढ़ें ज्ञानशाला में भैक्षव दर्शन दृष्टान्तों को।
श्रुत सम्पत् से बन समृद्ध समझाएँ सम्भ्रान्तों को।
पावन नमस्कार पञ्चक के जप में शिशु तन्मय हो।।

सबल ज्ञानशाला का साया सम्बल देने वाला।
प्रबल मनोबल संवर्धक निर्बलता हरने वाला।
संचालक शिक्षकगण के प्रति समुचित शिष्ट विनय हो।।

कुशल ज्ञानशाला में नियमित कौशल का संवर्धन।
अभिभावकगण का संप्रेरण प्रोत्साहन अनुमोदन।
भव्य नव्य पीढ़ी में विद्या सद्गुणगण संचय हो।।

सुषम ज्ञानशाला तेरापंथ शासन की फुलवारी।
वीर भिक्षु भाराजममाडाकातुम करुणाधारी।
महाश्रमण कोमल कलियों की शोभनता अक्षय हो।।

आचार्य महाश्रमण

अनुक्रम

संपादकीय	5
बालक के निर्माण की प्रक्रिया	6
कैसे करें संस्कारों का निर्माण ?	9
शुद्ध बुद्धि का विकास हो	12
समुचित समन्वय हो शिक्षा व संस्कार में	14
बुद्धि के साथ हृदय का मेल हो	15
जीवन निर्माण का आधार सद्संस्कार	16
संस्कार देते हैं जीवन को आकार	18
विजय यात्रा के हमसफर	20
बालक बने सद्संस्कारी	22
भावी पीढ़ी और हम	23
बच्चों का संसार	24
कैसे बनें सफल अभिभावक ?	25
ज्ञान का दीपक	27
संयमित रहें	28
ज्ञानशाला एक परिचय	34
ज्ञानशाला रजत जयंती समारोह	35
ज्ञानशाला : अथ से अद्य	36
ज्ञानशाला : सफर 25 वर्ष का	42
विचार क्रांति नहीं, व्यक्ति क्रांति चाहिए	47
आवश्यकता है भिक्षु वाणी को समझने की	48
चुनौतियों से मिलती है सीख	63

काव्य प्रवाह

19	कैसा हो कौशल ?
26	स्वप्न करें साकार
46	बाल संस्कार

आज की बात

29	कार्टून कैरेक्टर्स और आज के बच्चे

कथा बोध

30	साहस व सच अनमोल

अब तो जागें

31	फास्टफूड है हानिकारक

बच्चों की दुनिया

32	हमें उड़ते हवाई जहाज की छाया क्यों नहीं दिखाई देती ?
32	बरतन पर कैसे व क्यों चिपकता है टेफ्लॉन

स्वास्थ्य विशेष

33	बच्चों के रोग में सामान्य उपचार

युवादृष्टि
नयी सृष्टि का प्रतीक मासिक
वर्ष : 45, अंक : 10, अक्टूबर 2017

संपादकीय

देश के बड़े-बड़े शहरों और कस्बों में हर साल फूलों की प्रदर्शनियाँ लगाई जाती हैं। इन प्रदर्शनियों में जो फूल प्रदर्शित किए जाते हैं वे सामान्य फुलवारी या बगीचों के फूलों की तुलना में अत्यन्त मनमोहक, सुंदर और आकर्षक होते हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि उन फूलों के खिलने से पूर्व एक कुशल माली उन्हें पर्याप्त सिंचन, उनकी समुचित काट-छाँट और सार-सँभाल करते हुए अपना स्नेहित सान्निध्य उपलब्ध कराता रहता है। इसलिए इन फूलों की वैभवता के पीछे माली की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

संतान की प्रथम पाठशाला उसकी माँ है। इसके साथ-साथ बच्चों के संस्कार निर्माण में अभिभावक, शिक्षक एवं गुरु मुख्य माने जाते हैं। अत: परिवार, समाज, देश का निर्माण माताओं पर निर्भर है। माँ केवल संतान को जन्म ही नहीं देती बल्कि योग्य और संस्कार सम्पन्न बनाती है। जो संतान के लिए एक माली की भूमिका में होती है। परिवार में बच्चा जैसा देखता-सुनता है वैसा ही सीखता है। माता-पिता के यही संस्कार बच्चों के अवचेतन मन पर जम जाते हैं। उनके यही संस्कार जीवनपर्यंत संतान पर अपना प्रभाव दिखाते हैं। बच्चों के संस्कार निर्माण में अभिभावकों का संस्कारी होना भी बहुत आवश्यक है।

परंतु आज के इस भौतिकवादी युग में अक्सर माता-पिता अपने बच्चों को संस्कारित बनाने की अपेक्षा उनके बौद्धिक व व्यावसायिक विकास पर ज्यादा ध्यान देते हैं। टी.वी., कम्प्यूटर, इंटरनेट और मोबाइल के इस प्रतिस्पर्द्धी युग में बच्चे विकास की दिशा में उड़ान भरने लगते हैं और नए-नए सपने देखते हैं। दूसरी ओर माता-पिता उस समय उन पर ध्यान नहीं देते। इस असावधानी के कारण बच्चों में स्वच्छंदता बढ़ती जाती है। अक्सर कुछ माता-पिता उनके साथ नहीं बैठते, उनकी बातें व समस्याएँ नहीं सुनते, ऐसे माँ-बाप अपनी जिम्मेदारी से दूर हो जाते हैं। जबकि बच्चे इस उम्र में लाड़-प्यार व वात्सल्य के भूखे होते हैं। इसलिए उनके प्रति सहयोग की भावना व सहानुभूति रखते हुए वत्सलता और मृदु अनुशासन के साथ उनके बचपन को सँवारें। बच्चों के विकास का आधार है ज्ञान अर्थात् अच्छा साहित्य, घर का अच्छा वातावरण एवं माँ-बाप के स्वयं की अच्छी जीवन शैली; क्योंकि बचपन में उन्हें जैसे संस्कार मिलते हैं, वैसे ही जीवन बनता है। यदि हमें समाज को संस्कारवान बनाना है तो भावी पीढ़ी में संस्कारों का निर्माण करना अति आवश्यक है। तेरापंथ धर्मसंघ में ज्ञानशाला के माध्यम से संस्कारों का बीजारोपण किया जाता है। इसलिए गुरुदेव तुलसी ने बच्चों को संस्कारों से सम्पन्न बनाने के लिए ज्ञानशाला का उपक्रम शुरू किया। यहाँ बच्चों का सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास होता है। ज्ञानशाला उनके लिए एक ऐसा आलोक है जहाँ उन्हें आध्यात्मिक, शैक्षणिक, व्यावहारिक, सांस्कृतिक एवं व्यक्तित्व निर्माण करने का सजग प्रशिक्षण मिलता है।

ज्ञानशाला के इस रजत जयंती वर्ष के उपलक्ष्य में बच्चों को चारित्र, सदाचार एवं शिष्टाचार के संस्कार निर्माण में सहयोगी बनें। जिससे बच्चों का ही नहीं बल्कि स्वयं माता-पिता का जीवन सुखमय बनेगा और उनके उज्ज्वल भविष्य का निर्माण होगा। संस्कारी बच्चों के कारण ही समाज व राष्ट्र की शान बनती है। क्योंकि विश्व का भाग्य इन छोटे बच्चों पर ही निर्भर करता है।

गुरुदेव श्री तुलसी की ये पंक्तियाँ सदा स्मृति में रहें—

संस्कारों की संपदा है, उत्कृष्ट, अमूल्य,
धन-वैभव संसार का, रखता है क्या मूल्य ?

ओम् अर्हम्

बी.सी. जैन (भलावत)

सम्पादक	कार्यकारी सम्पादक	सह-सम्पादक	लेजर टाइप सेटिंग
बी.सी. जैन (भलावत)	सुधीर चौरड़िया	नवीन बाँठिया	प्रदीप जैन

कार्यालय
210, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-110002

प्रकाशक
अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद्, युवालोक, पो. लाडनूं-341306 (राज.)

'युवादृष्टि' में प्रकाशित सामग्री से संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है। राजस्थान सरकार द्वारा पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत

'युवादृष्टि' में प्रकाशित सामग्री का उपयोग प्रकाशक, सम्पादक, लेखक की अनुमति के बिना अन्य कहीं भी प्रकाशन में न करें।

शुल्क
त्रैवार्षिक : 900 रु.
15 वर्षीय : 3500 रु.

बालक के निर्माण की प्रक्रिया

आचार्य तुलसी

सत्य बोलना मनुष्य का स्वभाव है। स्वभाव में विकृति आती है, तब वह असत्य बोलता है। शुरू-शुरू में असत्य बोलने में झिझक होती है। किन्तु धीरे-धीरे असत्य बोलने का भी अभ्यास हो जाता है। फिर कुछ भी कहने और करने में मन प्रकंपित नहीं होता। बचपन में सत्य की अभिव्यक्ति स्वाभाविक प्रक्रिया होती है। आगे चलकर असत्य-भाषण स्वाभाविक बन जाता है। इसलिए जिसे सत्यनिष्ठ रहना है, उसे अपना बालकपन सँजोकर रखना चाहिए...

मानव लोक की सबसे अधिक सुन्दर, प्रिय और आकर्षक रचना है बालक। उसका निर्विकार सौन्दर्य अनायास ही मन को मुग्ध कर लेता है। काश! मनुष्य विकास की अभीप्सा को छोड़ अपने बालकपन को सुरक्षित रख पाता। बालक की सरलता, निश्छलता, सहजता, आत्मीयता आदि गुण अवस्था विशेष से अनुबन्धित न रहकर बढ़ती हुई उम्र के साथ मनुष्य का अनुगमन करते रहें तो अवस्था से युवा या वृद्ध होने पर भी जीवन की मौलिकता सुरक्षित रह सकती है। मौलिकता का जितना ह्रास होता है, आदमी उतना ही कृत्रिम बन जाता है और उसके प्रति होने वाली प्रियता या अप्रियता का सम्बन्ध उसकी उपयोगिता से जुड़ जाता है।

सहजता

तीर्थंकरों के लिए कहा जाता है कि उनका शरीर बिना अलंकार अलंकृत रहता है। इस कथ्य की पुष्टि में शिशु का उदाहरण दिया जाता है। शिशु की प्रत्येक क्रिया स्वाभाविक होती है। उसका रोना, हँसना, खेलना, बोलना, यहाँ तक कि रूठना भी सहज लगता है। उसकी तुतलाती बोली में भी विशेष प्रकार का आकर्षण होता है। बड़े-बूढ़े सब उसका अनुकरण करना चाहते

हैं। प्रश्न हो सकता है कि ऐसा क्यों होता है? बालक की इस सर्वप्रियता का राज क्या है? सीधा-सा समाधान है इस प्रश्न का, वह है उपचारहीनता। बालक के जीवन में उपचार नाम की कोई चीज नहीं होती। वह जैसा है, उससे अतिरिक्त दिखाई देने में उसे कोई रस नहीं होता। उसकी यह सहजता ही सबको अपनी ओर खींचने में निमित्त बनती है।

सत्यता

जैन आगमों में सत्य के चार प्रकार बताए गए हैं—

- काव्य ऋजुता—शरीर की छलना-रहित प्रवृत्ति।
- भाव ऋजुता—मन की छलना-रहित प्रवृत्ति।
- भाषा ऋजुता—वचन की छलना-रहित प्रवृत्ति।
- अविसंवादिता—कथन और आचरण का अविरोध।

बालक के जीवन में ये चारों बातें सहज होती हैं, इसलिए उसकी बातों में पूर्वापर विरोध नहीं होता और न ही उसके व्यवहारों में किसी प्रकार का लुकाव-छिपाव का प्रदर्शन जैसा कोई तत्त्व होता है। बालक के जीवन में सत्य का सहज अवतरण होता है, जबकि एक अवस्था के बाद मनुष्य को सत्य की शिक्षा देनी पड़ती है। बच्चे को सिखाने पर भी उसे असत्य बोलना नहीं आता। उसके कथन मात्र से यह बात प्रकट हो जाती है कि वह जो कुछ कह रहा है, सिखाया हुआ कह रहा है।

> बच्चा प्रकृति से कोमल होता है। वह किसी प्रकार की क्रूरता और प्रतिकूलता को सहन नहीं कर सकता। उसके साथ क्रूर व्यवहार करना उसे क्रूर बनाने का प्रयत्न करना है। बच्चे में संग्रह करने की वृत्ति नहीं होती। वह अपने और पराए की भेदरेखा को नहीं जानता...

एक छोटी बच्ची स्कूल गई। वहाँ पहले दिन उसकी मैडम ने सिखाया कि परस्पर गाली-गलौज नहीं करना चाहिए। बच्ची घर आई। उसने अपनी मम्मी को गाली-गलौज करते देखा तो वह बोली—'मम्मी! मैडम ने कहा कि गाली देना बहुत बुरी बात है।' उसकी मम्मी ने अपनी बिटिया के कथन को सुना-अनसुना कर दिया।

दूसरे दिन वह स्कूल गई। मैडम ने उसको बोधपाठ दिया—'किसी का तिरस्कार नहीं करना चाहिए।' वह घर गई। द्वार पर किसी भिखारी को अपने पिता द्वारा तिरस्कृत होते देख उसने धीरे से कहा—'पापा! किसी का तिरस्कार मत करो।' पिता ने बिना कुछ सोचे-समझे उसके नाजुक कपोल पर एक चाँटा जड़ दिया। तीसरे दिन उसकी मैडम ने कहा—'झूठ बोलना पाप है।' वह घर आई तो उसकी मम्मी ने उसको झूठ बोलने की प्रेरणा दी। इस विसंगति से बच्ची सहम गई। अगले दिन स्कूल जाने का समय हुआ। स्कूल की बस घर से बाहर खड़ी थी। माता-पिता दोनों उसे जल्दी तैयार होने के लिए कह रहे थे। वह अनमनी होकर बोली—'मम्मी! मैं स्कूल नहीं जाऊँगी।' 'क्यों?' इस प्रश्न के उत्तर में वह बोली—'वहाँ मैडम सब कुछ गलत पढ़ाती हैं।'

स्कूल में जो कुछ सुना और सीखा, घर में सर्वथा विपरीत आचरण तथा मम्मी-पापा की डाँट से बच्ची घबरा गई और उसने स्कूल जाने से इन्कार कर दिया। मम्मी-पापा को अपनी भूल का अहसास हो गया। उन्होंने बड़ी मुश्किल से लड़की को समझाकर स्कूल जाने के लिए तैयार किया।

सत्य बोलना मनुष्य का स्वभाव है। स्वभाव में विकृति आती है, तब वह असत्य बोलता है। शुरू-शुरू में असत्य बोलने में झिझक होती है। किन्तु धीरे-धीरे असत्य बोलने का भी अभ्यास हो जाता है। फिर कुछ भी कहने और करने में मन प्रकंपित नहीं होता। बचपन में सत्य की अभिव्यक्ति स्वाभाविक प्रक्रिया होती है। आगे चलकर असत्य-भाषण स्वाभाविक बन जाता है। इसलिए जिसे सत्यनिष्ठ रहना है, उसे अपना बालकपन सँजोकर रखना चाहिए।

वर्तमान में जीना

वर्तमान में जीना योगविद्या का प्रमुख सूत्र है। योग के साधक प्रयत्नपूर्वक वर्तमान क्षण में जीने का अभ्यास करते हैं। सलक्ष्य अभ्यास करने पर भी यह स्थिति किसी विशिष्ट योगी को ही उपलब्ध हो पाती है, जबकि बालक वर्तमान जीवी ही होता है। वह अतीत की स्मृति नहीं करता और भविष्य की कल्पना में नहीं उलझता। उसके पास कोई एक वस्तु है। उसे उससे छीन लेने पर एक क्षण के लिए वह रुआँसा होता है, किन्तु दूसरी वस्तु मिल जाने पर दूसरे ही क्षण खुश हो जाता है। किसी भी व्यक्ति या वस्तु के वियोग का उसके मन पर दीर्घकालीन प्रभाव नहीं होता। बालक की वह वर्तमान जीविता ही उसे स्वास्थ्य, सुख और प्रसन्नता देने वाली है।

प्रभु यीशु एक बगिया के निकट से गुजरे। साथ में उनके कुछ मित्र थे। उन्होंने मित्रों का ध्यान बगिया की ओर आकृष्ट करते हुए कहा—'देखो ये फूल खिल रहे हैं। इन्हें पता नहीं कि कल सूरज उगेगा या नहीं? पौधों को पानी मिलेगा या नहीं? पर आज ये सम्पूर्ण रूप से खिले हुए हैं। कल के साथ इनका कोई अनुबन्ध नहीं है, इसीलिए ये इस रूप में खिले हुए हैं।' मनुष्य कल की चिन्ता और व्यवस्था करता है। परसों की चिन्ता और व्यवस्था करता है। भावी पीढ़ी की चिन्ता और व्यवस्था करता है। अपनी कब्र की भी चिन्ता और व्यवस्था करता है। भविष्य की चिन्ता में आज की विस्मृति हो जाती है, आज का मूल्य चुक जाता है, आज की हत्या हो जाती है और आदमी कभी वर्तमान में जी

नहीं सकता। बच्चा अपने आज को जीवित रखता है, इसीलिए वह कुछ बन जाता है।

अभय की चेतना

बालक अभय होता है। भय के साथ उसका कोई सम्पर्क नहीं होता। वह आग में हाथ डाल लेता है और साँप को पकड़ने के लिए तत्पर हो जाता है। हाथ जल जाएगा या साँप काट लेगा, ऐसी भय चेतना उसमें सक्रिय नहीं रहती। कठिन-से-कठिन काम करते समय भी उसमें किसी प्रकार की झिझक नहीं होती। कहा जा सकता है कि उसमें सोचने-समझने की शक्ति नहीं होती। उसका बुद्धिबल और विवेकबल जागृत नहीं होता। यह प्रश्न सोच-समझ या बुद्धि-विवेक का नहीं, सहज मानवीय गुण का है। अभय बालक का सहज गुण है। वह भय को जानता ही नहीं है। भय उसे सिखाया जाता है। बच्चा जब भी रोता है, आग्रह करता है या ऐसा काम करता है, जिससे बड़े लोग डिस्टर्ब होते हैं, तब वे कहते हैं—'बेटा! तुझे भूत ले जाएगा, बाबा पकड़ लेगा, कान काट लेगा, हाबू खा जाएगा आदि।' ऐसे प्रसंग भय की संज्ञा को जगाते हैं अथवा बच्चे को असत्य बोलना सिखाते हैं।

भूल का अनुभव

किसी महिला ने एक दिन विशेष खाद्य पदार्थ बनाया और उसे अलमारी में रख दिया। छोटे बच्चे ने अलमारी खोलने का प्रयत्न किया तो वह बोली—'बेटा! अलमारी के अन्दर हाबू बैठा है। इसे खोलना मत। खोलोगे तो हाबू खा जाएगा।' बच्चा एक बार तो सहम गया। पर बार-बार उसमें मिठाई रखते देख उसका मन ललचा गया। एक दिन उसने माँ की आँख बचाकर अलमारी को थोड़ा-सा खोला। शायद किसी कोने से हाबू निकल आए, इस डर से वह कुछ देर खड़ा रहा। किन्तु जब भीतर से कोई बाहर नहीं आया तो उसने हिम्मत कर अलमारी खोल ली। बच्चे ने जी भरकर मिठाई खाई और अलमारी बन्द कर दी। कुछ देर बाद महिला ने किसी काम से अलमारी खोली। बच्चे की करतूत उससे छिपी नहीं रही। उसने बेटे को बुलाकर पूछा—'बोली, अलमारी किसने खोली? मिठाई किसने खाई?' बच्चे ने सारी बात पहले से सोच रखी थीं। वह तटस्थ भाव से बोला—'माँ! मुझे क्या पता? तुम कह रही थीं इसमें हाबू रहता है। मिठाई वही खा गया होगा।'

बच्चे के इन बोलों ने माँ की विचार-चेतना को जगा दिया। उसे अपनी भूल का अनुभव हो गया। इस घटना से यह तथ्य भी स्पष्ट होता है कि बच्चे के संस्कारों को बिगाड़ने में माता-पिता की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

सच तो यह है कि बच्चे का लालन-पालन करना, उसे संरक्षण देना और संस्कारी बनाना बहुत कठिन है। सलक्ष्य बच्चों के निर्माण का प्रयत्न भी बहुत कम होता है। कुछ बच्चे ठोकरें खाते-खाते बन जाते हैं और कुछ बिगड़ जाते हैं। बालक का निर्माण करने के लिए माता को भी बालक बनकर रहना जरूरी है अन्यथा किसी भी बच्चे का निर्माण सही ढंग से नहीं हो सकता।

सामाजिकता : एक समस्या

बालक में न वासना होती है, न तृष्णा होती है और न आकांक्षा होती है। उसके मन में कुछ तथा व्यवहार में कुछ, ऐसा भी नहीं होता। वह भूख बिना खाता नहीं और भूख लगने के बाद खाए बिना रहता नहीं। कुछ माताएँ समय की प्रतिबद्धता के क्रम से बच्चे को बार-बार दूध या दूसरे पदार्थ देती हैं। बच्चे को भूख नहीं होती, इसलिए वह खाना नहीं चाहता। उसे जबरन खिलाया-पिलाया जाता है। परिणाम यह होता है कि भूख के अभाव में भोजन को सुपाच्य बनाने वाले स्राव नहीं होते, फलतः बच्चा बीमार हो जाता है। उसे उल्टी या दस्त होने लगते हैं। डॉक्टर का उपचार चलता है। एलोपैथिक औषधियों से पेट की आँतें खराब हो जाती हैं और बच्चे का स्वास्थ्य एक समस्या बन जाता है।

बच्चा सहज होता है इसलिए किसी प्रकार का वेग धारण नहीं कर सकता। जब और जहाँ इच्छा होती है, वह मलोत्सर्ग एवं मूत्रोत्सर्ग कर देता है। वह जैसे-जैसे बड़ा होता है, उसे सामाजिकता सिखाई जाती है। इस शिक्षण-प्रशिक्षण के मध्य वह वेग धारण करना भी सीख लेता है, जो उसके स्वास्थ्य की दृष्टि से दुष्प्रभावी प्रमाणित होता है।

निर्माण की प्रक्रिया

बच्चा प्रकृति से कोमल होता है। वह किसी प्रकार की क्रूरता और प्रतिकूलता को सहन नहीं कर सकता। उसके साथ क्रूर व्यवहार करना उसे क्रूर बनाने का प्रयत्न करना है। बच्चे में संग्रह करने की वृत्ति नहीं होती। वह अपने और पराए की भेदरेखा को नहीं जानता। ये सब ऐसी वृत्तियाँ हैं, जो स्थायी रह सकें तो मनुष्य इस दुनिया का सर्वाधिक सुखी, सबसे सुन्दर एवं सर्वश्रेष्ठ प्राणी हो सकता है।

बालक का निर्माता सृष्टि का निर्माता है। उसे प्रारम्भ से ही कुछ बातों की ओर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित करना चाहिए, जिससे बच्चे का सही निर्माण हो सके—

बच्चे को हर बात की सही जानकारी दी जाए।

- बच्चे की जिज्ञासाओं का उत्तर देते समय झुँझलाहट से बचा जाए।
- बच्चे में प्रारम्भ से ही अच्छी आदतें डालने का प्रयत्न किया जाए।
- बच्चों को प्रारम्भ से ही स्वावलम्बी बनने की प्रेरणा दी जाए।
- बच्चे को बुरे व्यक्तियों के सम्पर्क से दूर रखा जाए।
- बच्चे को बोध देने के लिए मनोवैज्ञानिक तरीके काम में लिए जाएँ।
- बच्चे की सहजता को सुरक्षित रखने का प्रयत्न किया जाए।

कैसे करें संस्कारों का निर्माण?

आचार्य महाप्रज्ञ

व्यक्ति में अच्छाई और बुराई दोनों के बीज विद्यमान होते हैं। ऐसा कोई व्यक्ति नहीं होता, जिसमें केवल अच्छाइयाँ ही अच्छाइयाँ हों और ऐसा भी कोई व्यक्ति नहीं होता, जिसमें बुराइयाँ ही बुराइयाँ हों। दोनों प्रकार के बीज विद्यमान रहते हैं। यह कहा जाता है—छोटा बच्चा जन्म लेता है वह खाली पाटी या सादा स्लेट होता है, किन्तु यह गलत बात है। खाली कोई नहीं होता। हर व्यक्ति भरा हुआ होता है। एक छोटे बच्चे के भीतर भी इतना छिपा होता है, इतना भरा होता है, जितना कि एक बड़े में। अन्तर सिर्फ यही है कि बड़े में वे सब बातें अभिव्यक्त हो जाती हैं। उसके भीतर जो कुछ भरा पड़ा है, वह वाणी के द्वारा, कर्म के द्वारा सामने आ जाता है, छोटे में वे अभिव्यक्त नहीं होतीं, छिपी रहती हैं। अन्तर केवल व्यक्त और अव्यक्त का है। होने और न होने का कोई अन्तर नहीं है।

दोहरा दायित्व

प्रश्न है—प्रकट क्या हो? सामने क्या आये? जीवन का अच्छा पक्ष, शुक्लपक्ष प्रकट हो या जीवन का बुरा पक्ष, अँधेरे का पक्ष प्रकट हो, यह हमारे पुरुषार्थ पर निर्भर है। यह निर्माता पर भी निर्भर है कि हम किस पक्ष को उभारें, जिससे संतान अच्छी बन सके। किस पक्ष को दबाएँ, जिससे बुराइयाँ उभर कर ऊपर न आ सकें और वे धीरे-धीरे शान्त या क्षीण हो जाएँ, यह है हमारा करणीय कार्य। बच्चा क्या लेकर आया है, इस पर हमारा कोई वश नहीं है। करना इतना ही है कि उसमें जो अच्छाई के बीज विद्यमान हैं, उन्हें उभार कर ऊपर ला सकें। इसमें महिलाओं का दोहरा दायित्व है। पुरुषों का इकहरा दायित्व है। पुरुष का काम है अपने संस्कारों का निर्माण करना। महिला का काम है—अपने संस्कारों का निर्माण करे और साथ-साथ संतान के संस्कारों का भी निर्माण करे। क्योंकि संतान का संबंध जितना माता के साथ होता है, उतना पिता के साथ नहीं होता। उसे साहचर्य भी जितना माता का मिलता है, उतना पिता का नहीं। बहुत सारे पिता तो ऐसे होते हैं, जो बच्चों को सोया हुआ ही देखते हैं। स्थिति ही कुछ ऐसी बन गयी है—देर रात को जब पिता लौटकर आता है तब तक बच्चा सो चुका होता है और सवेरे जब बच्चा स्कूल जाता है, तब तक पिता सोये रहते हैं।

जरूरी है स्वयं के संस्कारों का निर्माण

किसी ने एक व्यक्ति से पूछा—तुम्हारा लड़का कितना बड़ा हो गया? उसने हाथ फैलाते हुए कहा—'इतना बड़ा'। उसने कहा—महाशय! बच्चा तो खंभे की तरह बढ़ता है, चारपाई की तरह नहीं। उस व्यक्ति ने कहा—मैंने उसे सदा पलंग पर सोए हुए ही देखा है।

पिता को हर काम के लिए फुर्सत है, पर बच्चे के संस्कार-निर्माण के लिए फुर्सत नहीं है, किन्तु माँ का बच्चे के साथ निरन्तर सम्पर्क रहता है। प्रात:काल मुनिजी घरों में भिक्षा के लिए गए। बहनों से पूछा—'इतनी जल्दी रसोई बना ली? वे बोलीं—'महाराज! क्या करें, बच्चों को स्कूल जल्दी जाना पड़ता है।' पिता अभी तक सोया ही है और माँ ने बच्चों को खाना खिला कर स्कूल भी भेज दिया। यह माँ का काम है। आन्तरिक संबंध भी जितना माँ का बच्चों के साथ होता है, उतना पिता के साथ नहीं होता। यह एक सहज मनोवृत्ति है। संस्कार-निर्माण करने वाले व्यक्ति को पहले समझ लेना है कि किसका निर्माण करना है? दूसरे के संस्कारों का निर्माण करने से पहले स्वयं के संस्कारों का निर्माण जरूरी है। स्वयं को संस्कृत बनाकर ही व्यक्ति दूसरों का संस्कार-निर्माण कर पाता है।

स्वार्थ का सीमाकरण

संस्कार निर्माण का पहला सूत्र है—स्वार्थ का सीमाकरण। यह नहीं कहा जा सकता कि स्वार्थ को छोड़ दिया जाए। कोई भी व्यक्ति सर्वथा स्वार्थ को छोड़ नहीं सकता। राजनीतिक प्रणालियों में कितने परीक्षण हो गये। साम्यवादी प्रणाली में कम्यूनों का विकास हुआ, किन्तु उन्हें लौटना पड़ा। यह समझ में आ गया कि वैयक्तिक स्वार्थ की पूर्ति हुए बिना आदमी में कोई अन्त:प्रेरणा

नहीं जाग सकती। हमारी सबसे बड़ी अन्त:प्रेरणा है स्वार्थ। वैयक्तिक स्वार्थ होता है तब आदमी बहुत अच्छा काम करता है, मनोयोग से करता है। जहाँ समूह के लिए करना पड़ता है, वहाँ मनोवृत्ति दूसरे प्रकार की बन जाती है। वह सोचता है—सब काम कर रहे हैं, मैं अकेला नहीं करूँगा तो क्या फर्क पड़ेगा। इसी तरह दूसरे-तीसरे की मानसिकता बनती जाती है।

परीक्षा का निष्कर्ष

एक राजा ने तीन नौकर रखे। परीक्षा लेने के लिए तीनों को राजा ने अपने पास बुलाया। राजा ने उनसे पूछा—'बताओ, अगर संयोगवश ऐसा हो जाए कि मेरी दाढ़ी और तुम्हारी दाढ़ी में एक साथ आग लग जाए, तो तुम क्या करोगे? एक बोला—'महाराज! पहले अपनी दाढ़ी की आग बुझाऊँगा' राजा ने कहा—'तुम स्वार्थी आदमी हो, इसलिए काम के योग्य नहीं हो।' दूसरे ने कहा—'महाराज! मैं आपका सेवक हूँ, इसलिए पहले आपकी चिन्ता करूँगा, अपनी नहीं। मैं आपकी दाढ़ी की आग बुझाऊँगा।' राजा ने सोचा—यह चालाक और चापलूस आदमी है। जो कह रहा है, वैसा करेगा नहीं। वह भी नहीं जँचा। राजा ने तीसरे से पूछा। उसने कहा—'महाराज! ऐसी स्थिति में मैं एक हाथ से अपनी दाढ़ी की आग बुझाऊँगा और दूसरे हाथ से आपकी दाढ़ी की आग बुझाऊँगा।' राजा ने उसे अपनी सेवा में नियुक्त कर लिया।

यह है स्वार्थ का सीमाकरण। केवल अपना ही स्वार्थ नहीं, दूसरे का भी हित साधना चाहिए। जहाँ इस तरह का संस्कार निर्मित होता है, हमारे व्यवहार की अनेक समस्याएँ सुलझ जाती हैं। परिवारों में कलह क्यों होती है? इसीलिए कि जहाँ देवरानियाँ-जेठानियाँ अपने-अपने बच्चे को प्राथमिकता देना शुरू करती हैं, वहीं दूसरों पर इसकी तीव्र प्रतिक्रिया शुरू हो जाती है। जहाँ सामुदायिक जीवन है, वहाँ अपने स्वार्थ को असीम न बनाएँ, उसकी एक सीमा रखें कि इससे आगे नहीं बढ़ना है तो समस्या कभी पैदा नहीं होगी।

उदार दृष्टिकोण

संस्कार निर्माण का दूसरा सत्र है—उदार दृष्टिकोण। दृष्टिकोण हमारा विशाल होना चाहिए। संकीर्ण दृष्टि से देखने वाला अपने आस-पास तक ही देख पायेगा। आादमी को दूर तक की ओर आगे-पीछे की बात भी जरूर देखनी चाहिए। बहुत वर्ष पहले हम बीदासर की एक गली से होकर जा रहे थे। एक नोहरा देखा—उसकी जर्जर दीवारें ढह चुकी थीं, किन्तु विशाल फाटक और उसमें झूलता बड़ा-सा ताला अभी भी लटक रहा था। आगे तो ताला लगा बड़ा-सा दरवाजा और नोहरे की चारों ओर की दीवारें ध्वस्त, ताले और दरवाजे का मतलब क्या रहा? इसलिए आगे-पीछे की ही नहीं, अपितु चारों तरफ की सोच होनी चाहिए। दृष्टिकोण संकुचित होगा तो व्यवहार में उलझनें पैदा होंगी। दृष्टिकोण व्यापक और उदार होगा तो व्यापक हितों की ओर ध्यान जाएगा। संघर्ष का कारण ही संकुचित दृष्टिकोण है। संकुचित वृत्ति परिवार की भी समस्या है, समाज की भी समस्या है। बहुत सीमित दृष्टि से बात सोची जाती है इसीलिए अनेक समस्याएँ उलझ जाती हैं।

हीन और अहं भाव से मुक्ति

संस्कार-निर्माण का तीसरा सूत्र है—हीनभावना और अहंभावना से मुक्त रहने का अभ्यास। महिलाओं में हीनभावना की समस्या ज्यादा देखी जाती है, यह स्वाभाविक भी है। पुरुष को अहंभाव अधिक सताता है तो महिलाओं को हीनभाव ज्यादा सताता है। हीनभाव और अहंभाव से मुक्त होकर संतुलित जीवन कैसे जीया जाए, यह एक प्रश्न है। हीनता के कारण भय पैदा होता है। भय के अनेक कारण हैं। भय के कारणों में ही आदमी बैठा है, इसलिए भय होना कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है। हीनता की अनुभूति भी अस्वाभाविक बात नहीं है, किन्तु जिसे संस्कार का निर्माण करना है, उसके लिए यह अभ्यास जरूरी है कि वह कैसे हीनता और अहं की ग्रंथियों से बच सके?

प्रश्न संतान को संस्कारित करने का

दूसरा प्रश्न है—संतान को संस्कारित करने का। बच्चों के संस्कारों का निर्माण कैसे करें? शैशवावस्था और बाल्यावस्था में बच्चे के साथ कैसा व्यवहार होना चाहिए? उसे क्या सिखाना चाहिए? इस बात का ज्ञान प्रत्येक माता-पिता को होना जरूरी है। माँ को तो प्रारम्भ से ही बैठना, चलना और फिर बोलना सिखाना पड़ता है। बच्चे के संस्कार ऐसे हों, जो जीवनभर कदम-कदम पर काम आएँ। वे संस्कार हमेशा उसके लिए एक अच्छे मित्र और हितैषी का काम दे सकें। इसके लिए सर्वप्रथम आवेश पर नियंत्रण करने की प्रक्रिया सिखाई जानी चाहिए। अपने आवेशों पर नियंत्रण कैसे करें, इसका प्रारम्भ से ही बच्चे को अभ्यास कराया जाना चाहिए। जो माता-पिता अपने बच्चों को इस तरह के संस्कार नहीं देते, वे उनके शत्रु हैं।

शत्रु हैं वे माता-पिता

कहा गया— **'माता शत्रु पिता वैरी याभ्यां बालो न पाठितः**—जो बच्चे को नहीं पढ़ाते हैं, वे माता-पिता उनके दुश्मन हैं। आज माता-पिता बच्चे को पढ़ा कर सोचते हैं—क्या मैंने इसे इसीलिए पढ़ाया था? बच्चे के आचरण और व्यवहार को देखकर आज अधिकांश अभिभावकों की यही प्रतिक्रिया होती है। आज इस सूक्त को बदल कर यह कहा जाना चाहिए—जिन्होंने अपने बच्चे को अच्छे संस्कार नहीं दिये या आवेशों पर नियंत्रण करना नहीं सिखाया, वे माता-पिता उसके दुश्मन हैं। यह सूक्त ज्यादा सटीक बैठता है— माता शत्रु पिता वैरी, याभ्यां बालो न संस्कृत:। बच्चे को अच्छी शिक्षा दिला दी, किन्तु बच्चा शराब पीता है, अपराध में लिप्त है, झगड़ा-फसाद करता है तो वह शिक्षा किस काम की होगी? ऐसा आचरण वह इसलिए करता है

कि उसे आवेशों पर नियंत्रण करना नहीं सिखाया गया। शराब पीने की आदत भी आवेश के कारण होती है। एक आवेश जागता है तो व्यक्ति शराब की शरण लेता है। एक आवेश जागता है तो वह अपराध में चला जाता है। एक आवेश जागता है, आदमी क्रोधी और हत्यारा बन जाता है। ये सारे आवेश के परिणाम हैं, जो व्यक्ति से बुरे आचरण करवाते हैं। प्रारम्भ से ही उन पर नियंत्रण करना नहीं सिखाया जाता है तो यह किसी भी बच्चे के प्रति न्याय की बात नहीं होती।

एकाग्रता का अभ्यास कराया जाए

संस्कार निर्माण का एक सूत्र है—बच्चे को एकाग्रता का अभ्यास कराया जाए। यह काम बचपन से ही शुरू किया जाना चाहिए। यदि बचपन से ही यह अभ्यास कराया जाए तो उसके बहुत अच्छे परिणाम सामने आएँगे। एकाग्रता के अभ्यास के साथ उसे संकल्प शक्ति के विकास का भी अभ्यास कराया जाना चाहिए। अगर सात वर्ष की अवस्था से ये तीन बातें बच्चों को सिखा दी जाएँ तो फिर किसी भी माता-पिता को आगे चलकर यह कहने की नौबत नहीं आएगी कि क्या हमने यही दिन देखने के लिए इतना पढ़ाया था? ऐसा होता है तो बच्चे में जो अच्छे संस्कारों के बीज निहित हैं, उनके अंकुरित होने, पल्लवित-पुष्पित होने और फलित होने का सहज ही अवसर मिल जाता है। वह ऐसी उर्वरा भूमि है, जिसमें अच्छे बीजों का उगना अनिवार्य है।

दीर्घश्वास का प्रयोग

प्रश्न है—ये संस्कार कैसे दिए जाएँ? इनके साधन क्या हो सकते हैं? इसका पहला उपाय है—दीर्घ श्वास का प्रयोग। बच्चे को लम्बा श्वास लेना सिखाया जाए और धीरे-धीरे इतना अभ्यास करा दिया जाए कि वह एक मिनिट में चार-पाँच श्वास लेना सीख जाए। अगर पाँच या दस मिनट भी बच्चे को इस तरह का अभ्यास कराया जाए तो तीन महीने में बच्चे के व्यवहार में पर्याप्त अन्तर देखा जा सकता है। उसे क्रोध आना कम हो जायेगा, मादक वस्तुओं से वह बहुत दूर रहेगा। मादक वस्तुओं का सेवन मानसिक थकान मिटाने के लिए होता है। नशे की यह खूबी है कि वह एक बार तो स्वर्ग जैसी सुख की अनुभूति करा देता है। दीर्घ श्वास का अभ्यास करने वाला, वर्तमान में जीने वाला इस तरह के झूठे सुख की खोज में नहीं जायेगा। उसे दीर्घश्वास में उससे ज्यादा नशा मिलेगा, जितना मादक पदार्थ में मिलता है। उसे बाहर का नशा खोजने की जरूरत ही नहीं पड़ेगी। नशे के जो परिणाम हैं, आफ्टर इफेक्ट्स हैं, उनसे सभी परिचित हैं, फिर भी नशा करते हैं, इसलिए कि दुनिया के झंझटों से, परेशानियों से, मानसिक उलझनों से मुक्ति मिलती है, स्वर्गिक आनन्द की अनुभूति होती है। दीर्घ श्वास का प्रयोग करने वाला नशे के बिना भी वैसा स्वर्गिक आनन्द पा लेता है, इसलिए नशा करने की बात उसके मन में ही नहीं आती है।

अनुभव सिद्ध तथ्य

अनेक बुरी आदतों से बचने का एक बहुत अच्छा उपाय है—दीर्घ श्वास का प्रयोग। जिन बच्चों में गुस्से की प्रवृत्ति ज्यादा होती है, उन्हें दीर्घ श्वास का प्रयोग बराबर कराया जाए तो निश्चय ही उसके अनुकूल परिणाम आएँगे। बच्चों के लिए नहीं, सभी के लिए यह अचूक उपाय है कि गुस्सा आते ही पाँच-सात मिनट दीर्घश्वास का प्रयोग किया जाए, गुस्सा समाप्त हो जाएगा। यह अनुभव सिद्ध तथ्य है कि छोटा श्वास आता है तो गुस्सा उतर आता है, श्वास लम्बा होता है तो आवेश विदा हो जाता है। आवेश को विदा करने का सबसे अच्छा उपाय है श्वास को लम्बा करना। आवेशों को निमंत्रित करने का सबसे सरल उपाय है छोटा श्वास लेना। आवेश तब आता है, जब श्वास छोटा चलता है या जब आवेश आता है तब वह श्वास को छोटा बनाकर आता है। दीर्घ श्वास में आवेश आए, यह सम्भव ही नहीं है।

जरूरी है जागरूकता

तनाव को कम करने का एक उपाय शिथिलीकरण भी है, किन्तु संस्कार देने वाले ये उपाय तभी कारगर होंगे जब बच्चे के माता-पिता इस संबंध में जागरूक होंगे। जागरूकता नहीं है और ठीक से समझा नहीं जाता है तो जानी हुई, सुनी हुई बात भी काम नहीं देती।

न्यायाधीश ने चोर से कहा—'तुम बार-बार दूसरों के घर में क्यों घुस जाते हो? मैंने तुमसे कई बार कहा है कि दूसरों के घर में चोरी से प्रवेश न किया करो, किन्तु तुम ऐसी हरकत बार-बार क्यों करते हो? चोर ने कहा—'मान्यवर! मुझे आपकी नसीहत हर समय याद रहती है, किन्तु क्या करूँ, जब घर के मुख्य द्वार पर 'स्वागतम्' लिखा देखता हूँ, तब मैं स्वयं को रोक नहीं पाता।'

अवश्यंभावी है सुखद परिणाम

हम हर बात का गलत अर्थ लगाने के आदी हो गये हैं। बात को ठीक से नहीं समझते हैं या कोई बहाना बना लेते हैं, चालाकियाँ करते हैं। निर्माण कहाँ से हो? कैसे हो? निर्माण के लिए पूरी सच्चाई के साथ इन बातों पर ध्यान दिया जाए, यह अपेक्षित है—कैसे अपने संस्कारों का निर्माण करें, कैसे अपने बच्चों के संस्कार का निर्माण करें? आवेशों पर नियंत्रण का अभ्यास, एकाग्रता बढ़ाने का अभ्यास और संकल्पशक्ति का विकास—अगर ये तीन बातें अभिभावक अपने बच्चों को सिखा सकें तो वे बच्चे का उतना भला कर पाएँगे, जितना दूसरा कभी नहीं कर सकेगा। परीक्षा के तौर पर ही सही, माताएँ अपने बच्चों में संस्कार के ये तीन सूत्र आरोपित करें। सुखद परिणाम अवश्यंभावी हैं।

शुद्ध बुद्धि का विकास हो

आचार्य महाश्रमण

मनुष्य के जीवन में शरीर का मूल्य है तो वाणी, चेतना और बुद्धि का भी बहुत मूल्य है। दुर्बुद्धि और बुद्धिहीन आदमी के सामने अनेक समस्याएँ आ सकती हैं और अधिक विकास की संभावना कम हो जाती है, इसलिए बुद्धि की प्राप्ति भी जीवन में बहुत महत्त्व रखती है। अनेक लोग ऐसे हैं जो बुद्धि संपन्न हैं। बुद्धि संपन्न होने के बाद भावशुद्धि अपेक्षित होती है। बुद्धि और शुद्धि इन दोनों का योग रहे तो जीवन में काफी अंशों में परिपूर्णता आ सकती है। बुद्धि कामधेनु भी बन सकती है और बुद्धि विषधेनु भी बन सकती है। अगर बुद्धि के साथ भावशुद्धि है तो वह कामधेनु बन जाती है और बुद्धि के साथ अशुद्ध भाव जुड़े हुए हैं तो वह एक प्रकार की विषधेनु यानी विष की तरह नाश करने वाली बन जाती है। जब मनुष्य की चेतना में अध्यात्म का विकास हो जाता है और अध्यात्म से जब बुद्धि का परिशोधन हो जाता है, तब वह बुद्धि शुद्ध बन जाती है। अध्यात्म से तात्पर्य है जिस बुद्धि के साथ संतोष जुड़ा हुआ है, सच्चाई और नैतिकता जुड़ी हुई है तो मानना चाहिए कि बुद्धि शुद्ध है। जिस बुद्धि के साथ क्षमाभाव जुड़ा हुआ है, ऋजुता, विनम्रता और संसार की अनित्यता का भाव जुड़ा हुआ है तो मानना चाहिए कि बुद्धि शुद्ध है।

शुद्ध बुद्धि से बहुत अच्छे काम किए जा सकते हैं। बुद्धि अशुद्ध हो जाए तो वह विनाश भी कर सकती है। मैं बुद्धि को बहुत सम्मान की दृष्टि से देखता हूँ। बुद्धिहीन आदमी क्या अच्छा कार्य कर पाएगा? हम बुद्धि के द्वारा कर्मों का बंध भी कर सकते हैं और बुद्धि के द्वारा कर्मों को काट भी सकते हैं। हमें बुद्धि से रास्ता मिल जाता है। बुद्धि एक आलोक है, प्रकाश है। बुद्धि होती है तो ज्ञान का विकास हो सकता है। बुद्धि एक शक्ति है। कुछ बच्चे इतनी तीक्ष्ण बुद्धिवाले होते हैं कि बहुत जल्दी बात को समझ लेते हैं, पाठ को याद कर लेते हैं, काफी अध्ययन भी कर लेते हैं और परीक्षा में अच्छे अंकों से पास हो जाते हैं, क्योंकि उनके पास बुद्धि की शक्ति है। कुछ बच्चे ऐसे होते हैं, जिनका बौद्धिक विकास नहीं होता। वे इतने विकल होते हैं कि उनमें कोई विकास की विशेष संभावना ही नहीं रहती। यह बुद्धि का तारतम्य है। जैन वाङ्मय के अनुसार बुद्धि का संबंध ज्ञानावरणीय कर्म के साथ होता है। जब ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम हो जाता है, तब बुद्धि अच्छे रूप में प्राप्त हो जाती है और जब ज्ञानावरणीय कर्म की सघनता रहती है, तब बुद्धि की मंदता बनी रहती है। एक पिता के यदि तीन पुत्र हैं तो तीनों पुत्र समान बुद्धिवाले हों, यह आवश्यक नहीं। कोई बहुत कुशाग्र बुद्धिवाला हो सकता है तो कोई मंद बुद्धिवाला भी हो सकता है और कोई बिल्कुल अविकसित चेतनवाला भी हो सकता है। इसलिए हम इस बात पर विचार करें कि जिनको बुद्धि प्राप्त है, वे बुद्धि का दुरुपयोग न करें, बुद्धि के द्वारा उलझनें पैदा न करें, गुत्थियों को उलझाएँ नहीं, अपितु कहीं गुत्थियाँ हों तो उन्हें बुद्धि के द्वारा सुलझाने का प्रयास करें। श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में बुद्धि पर विश्लेषण किया गया है। वहाँ तीन प्रकार की बुद्धि बताई गई है—सात्त्विक बुद्धि, राजस बुद्धि और तामस बुद्धि। सात्त्विक बुद्धि के बारे में श्रीकृष्ण कहते हैं—

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये।
बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्त्विकी।।

जो बुद्धि कर्म और अकर्म को समझती है, जो करने योग्य कार्य और न करने योग्य कार्य को समझती है, जो इस बात को समझती है कि किससे डरना चाहिए और किससे नहीं डरना चाहिए, कौनसी वस्तु आत्मा को बंधन में डालती है और कौनसी वस्तु आत्मा को मुक्त करती है, हे पार्थ! वह बुद्धि सात्त्विक होती है—जहाँ आवेश, आवेग, कषाय की प्रबलता होती है, वहाँ बुद्धि भी गलत दिशा में जा सकती है, गलत काम कर सकती है। हम बुद्धि का विकास करने का प्रयास करें और बुद्धि के द्वारा फिर ज्ञान का विकास करने का प्रयास करें, परन्तु बुद्धि के साथ शुद्धि रहे। गीता की सात्त्विक बुद्धि और उत्तराध्ययन की प्रज्ञा में मुझे काफी समानता प्रतीत हो रही है। हम प्रज्ञा का विकास करें। जिसकी प्रज्ञा विकसित नहीं है, उस व्यक्ति का शास्त्र भी उद्धार नहीं कर सकते। जिस व्यक्ति के पास शास्त्र में दिए गए तत्त्वों को ग्रहण करने की प्रज्ञा होती है, सात्त्विक बुद्धि का विकास होता है, वही व्यक्ति कल्याण की दिशा में आगे बढ़ सकता है।

श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में राजसी बुद्धि के बारे में श्रीकृष्ण कहते हैं—

यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च।
अयथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी।।

जिस बुद्धि के द्वारा मनुष्य धर्म और अधर्म को तथा करने योग्य कार्य को और न करने योग्य कार्य को गलत ढंग सें समझता है, हे पार्थ! वह बुद्धि राजसिक होती है।

जो बुद्धि अब तक धर्म को और अधर्म को यथार्थ रूप में ग्रहण करने में सक्षम नहीं है और क्या करना, क्या नहीं करना, क्या कर्तव्य और क्या अकर्तव्य, इसको नहीं जान पा रही है, जो यथार्थ से दूर है, वह बुद्धि राजसी कोटि की होती है। राजसी बुद्धि के कारण आदमी सम्यक् बोध नहीं कर पाता और सम्यक् बोध न होने से आचरण भी सम्यक् होना कठिन हो जाता है।

हमारी दुनिया में कर्तव्य का ज्ञान होना बड़ी बात होती है। जो आदमी अपने कर्तव्य के प्रति जागरूक होता है, वह अपने जीवन में

सफल होता है। जो लोग अपने कर्तव्य और अकर्तव्य को नहीं जानते, वे कभी भी अपना अनिष्ट कर सकते हैं। उनका ऐसा अनिष्ट हो सकता है जिसकी उन्होंने कभी कल्पना भी न की हो। गुरु-शिष्य, पिता-पुत्र, मालिक-मजदूर आदि सभी अपने कर्तव्य के प्रति जागरूक रहें, सब अपने कर्तव्यों को समझें और कर्तव्य के अनुसार कार्य करें तो जीवन का क्रम ठीक चलता है। जहाँ कर्तव्य से च्युति हो जाती है, कर्तव्य की पालना नहीं होती है, वहाँ कठिनाई पैदा हो सकती है। कर्तव्य से कहीं च्युति हो जाए तो तत्काल आदमी उसका परिष्कार करने का प्रयास करे। परमपूज्य गुरुदेव तुलसी का एक प्रसंग है। वि.सं. 2032 में परमपूज्य गुरुदेव तुलसी लाडनूँ में विराजमान थे, मर्यादा महोत्सव का समय था। पश्चिम रात्रि में यानी सूर्योदय से पहले साधुओं की सभा जुड़ी हुई थी। गुरुदेव तुलसी ने एक अवस्थाप्राप्त साधु को नामोल्लेखपूर्वक खड़ा किया और साधुओं की सभा में उलाहना देते हुए फरमाया कि आपने यह भूल की है, गलती की है। वे मुनिजी आगे आएँ, गुरुदेव को वंदना की और अपनी भूल को स्वीकार किया। अगले दिन जब वापस साधुओं की सभा जुड़ी, तब गुरुदेव तुलसी ने कहा—मैंने एक साधु को उलाहना दिया था। जिस गलती की शिकायत मेरे पास आई थी, उसका पुष्ट प्रमाण मेरे पास नहीं है। मैंने पुष्ट प्रमाण के बिना उनको दण्डित कर दिया, यह मैंने भूल कर दी। अब मैं अपनी भूल का परिष्कार करने के लिए प्रायश्चित्त करूँगा और प्रायश्चित्त स्वरूप मैं एक एकासन करूँगा। यह कर्तव्य के प्रति जागरूकता है। एक आचार्य का कर्तव्य है कि गलती होने पर शिष्य को उलाहना दे, किन्तु बिना कोई प्रमाण के मात्र सुनीसुनाई बात से किसी को उलाहना दे दिया जाए तो कुछ कर्तव्यच्युति की बात हो सकती है। एक साधु का कर्तव्य है कि अपनी साधना का विकास करे। हम स्वनामधन्य स्थूलिभद्र को देखें, जो वेश्या के पास रहकर भी निर्मल रह गए, कोई दाग नहीं लगने दिया। उन्होंने साधना का कितना विकास कर लिया था। साधु का यह फर्ज है कि वह अपनी साधना के प्रति जागरूक रहे और जितना संभव हो धर्मोपदेश दे, दूसरों को ज्ञान की बातें बताए।

बुद्धि के तीन प्रकारों में अन्तिम प्रकार है—तामसी बुद्धि। इस बुद्धि के बारे में गीताकार कहते हैं—

अधर्मं धर्ममिति या मन्यते तमसावृता।
सर्वार्थान्विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी।।

जिस बुद्धि के द्वारा अन्धकार में डूबा हुआ मनुष्य अधर्म को धर्म समझता है और सब बातों को एक विकृत रूप में (सत्य के विपरीत) देखता है, हे पार्थ! वह बुद्धि तामसिक होती है।

जैन वाङ्मय में एक शब्द आता है मिथ्यादर्शन अर्थात् तत्त्व के प्रति विपरीत श्रद्धा होना, जैसे—धर्म को अधर्म मानना और अधर्म को धर्म मानना। यही बात गीताकार ने तामसी बुद्धि के बारे में कही है। तामसी बुद्धिवाला व्यक्ति अधर्म को धर्म समझता है और धर्म को अधर्म समझता है, क्योंकि उसकी बुद्धि पर तमस का आवरण या मिथ्यात्व का आवरण छा जाता है। जो सभी विषयों में विपरीत श्रद्धा रखता है, उसकी बुद्धि को तामसी बुद्धि कहा गया है। सामान्यतया नास्तिकवाद को मिथ्यात्व कहा जाता है और आस्तिकवाद को समीचीन आस्था कहा जाता है। चार्वाक दर्शन नास्तिकवाद का दर्शन है। उसके अनुसार यह दुनिया उतनी ही है जितनी हमारी इन्द्रियों की विषय बनती है, जितनी हमें दिखाई देती है, उसके परे परलोक आदि कुछ नहीं है। इस सिद्धान्त के आधार पर कहा जा सकता है कि न परलोक है, न पुनर्जन्म है, इसलिए जब तक जीएँ, सुख से जीएँ, पास में पैसा न हो तो कर्जा लेकर भी घी पीएँ यानी खूब मौजमस्ती करें। क्योंकि शरीर के भस्मीभूत हो जाने के बाद कुछ भी नहीं बचेगा। चूँकि आत्मा का कोई तत्व है ही नहीं, जो कुछ है वह शरीर है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण का आधार आस्तिक दर्शन है और भौतिक दृष्टिकोण का आधार नास्तिक दर्शन है। तामसी बुद्धिवाला व्यक्ति नास्तिक दृष्टिकोणवाला होता है। जब तक तमस का प्रभाव रहता है, वह व्यक्ति नास्तिकता अथवा विपरीत श्रद्धा से ओत-प्रोत बना रहता है। प्रश्न होता है कि परलोक है या नहीं, यह हमें कैसे ज्ञात हो? जब तक पूरा ज्ञान नहीं होता, तब तक यह ज्ञात नहीं होता। इसका समाधान देते हुए किसी विद्वान ने कहा कि तुम परलोक के बारे में संदिग्ध हो तो भी गलत काम मत करो, क्योंकि अगर परलोक नहीं है फिर भी यदि तुमने अच्छे काम किए हैं तो तुम कौनसे घाटे में रहे? यदि परलोक है तो तुम्हें अच्छे कार्यों का फल आगे भी मिल जाएगा और परलोक नहीं है तो भी तुम्हारा वर्तमान जीवन तो अच्छा बीतेगा।

धार्मिक साहित्य में स्वर्ग और नरक की बात आती है। स्वर्ग और नरक तो स्वयं के आचरणों से मिलने वाली चीजें हैं। आचरण अच्छा है तो स्वर्ग मिल सकता है और आचरण खराब है तो नरक भी मिल सकता है। स्वर्ग और नरक की स्थितियाँ हमारे वर्तमान जीवन में भी आ सकती हैं। जीवन में शांति है, जीवन अच्छा है तो यहाँ भी स्वर्ग का अनुभव किया जा सकता है, जीवन में दुःख है तो यहाँ भी नरक का कुछ अनुभव किया जा सकता है। आदमी में गुणात्मकता होनी चाहिए, उदारता होनी चाहिए, अनासक्ति का अभ्यास बढ़ना चाहिए, धर्म का प्रभाव जीवन में रहना चाहिए। आदमी में आसक्ति ज्यादा है तो मानना चाहिए अभी मोह का प्रभाव है। दो मार्ग हैं—एक मोह का मार्ग और दूसरा मोक्ष का मार्ग। दोनों विपरीत मार्ग हैं। अगर मोह के मार्ग पर आगे बढ़ेंगे तो मोक्ष नहीं मिलेगा। अगर मोक्ष के मार्ग पर आगे बढ़ेंगे तो कभी मोह से मुक्त हो जाएँगे। आदमी के मन में धन के प्रति मोह रहता है, परिवार के प्रति मोह रहता है, पद के प्रति मोह हो जाता है, किन्तु मोह को कम करने की साधना ही मोक्ष की आराधना हो जाती है। आदमी में जब तक मोह प्रबल रहेगा तो बुद्धि तामसी हो जाएगी और जब मोह मंद हो जाएगा तो बुद्धि सात्त्विकता की ओर अग्रसर हो जाएगी। आदमी तामसी बुद्धि को छोड़कर सात्त्विक बुद्धि का विकास करे।

समुचित समन्वय हो शिक्षा व संस्कार में

शासन स्तम्भ मंत्री मुनि सुमेरमल 'लाडनूं'

समाजशास्त्रियों एवं मनीषियों ने कहा है—भावीपीढ़ी का चिंतन भविष्य का चिंतन है। भावीपीढ़ी का निर्माण भविष्य का निर्माण है। उसके प्रति जागरूक रहना सजग समाज का लक्षण है। जिस समाज में बच्चों के निर्माण का कोई कार्यक्रम नहीं, उस समाज का कोई भविष्य नहीं है। माता-पिता का पहला दायित्व बनता है कि वे बच्चों के भावी जीवन के प्रति जागरूक बनें। केवल संतान पैदा कर लेना पर्याप्त नहीं है। माँ-बाप बनने का मतलब है बहुत बड़ी जिम्मेदारी ओढ़ना।

जन्म लेने वाला बच्चा कोरा कागज होता है, सब कुछ उसे माता-पिता से सीखना है। वैसे गर्भ में आते ही सीखना शुरू कर देता है। माँ क्रोध करती है, झगड़ा करती है तो बच्चा क्रोधी व झगड़ालू बन जाता है। माँ झूठ बोलती है बच्चा वैसा ही करता है। गर्भ में आये संस्कार गूढ़ व रूढ़ हो जाते हैं, उन्हें मिटाना इतना आसान नहीं है। वे संस्कार अवचेतन मन तक चले जाते हैं। मौका मिलते ही उनका स्वरूप उभर आता है। इसलिए गर्भवती होते ही माँ को अपनी वृत्तियों पर सोचना चाहिये, परिमार्जनीय वृत्तियों को बदल लेना चाहिए, परिष्कृत कर लेना चाहिये, वरना वही वृत्तियाँ संतान में आ जाएँगी।

जन्म लेने के बाद तो पूरे घर का दायित्व हो जाता है कि वे अपने आने वाले नवजात शिशु के निर्माण में अपना दायित्व समझें। उनके कोमल दिमाग पर कोई गलत असर न पड़े, इसका पूरा ख्याल रखें। पालने में झूलने वाले व पारिवारिक सदस्यों की गोद में खेलने वाले बच्चे को नादान व अबोध मत समझो। उसकी ज्ञानेन्द्रियाँ उस समय में विशेष सक्रिय रहती हैं। ग्रहणशीलता विशेष होती है। इसलिए घर के बड़े बुजुर्ग सभी का दायित्व है कि वे घर के वातावरण को स्वच्छ, सात्विक व सौहार्दमय बनाये रखें, तभी बच्चा अनुकूल बनेगा, सौहार्दशील बनेगा।

बच्चे का भविष्य विद्यालय पर निर्भर करता है, विद्यालय के वातावरण का असर बच्चे पर सीधा पड़ता है। माता-पिता इसका ध्यान रखते हैं तो बच्चों को संस्कारी रख सकते हैं, वरना अब तक दिये संस्कार भी विलीन हो जाते हैं।

कलकत्ता का एक जैन तेरापंथी परिवार अपनी लड़की को देहरादून के एक प्रसिद्ध आवासीय विद्यालय में दाखिल कराने ले गया। लड़की को वहाँ प्रवेश मिल गया था इसलिए माँ-बाप खुश थे, परिवार खुश था। अच्छे विद्यालय में प्रवेश मिल जाने से लड़की की सहेलियाँ आदि सभी प्रसन्न थीं। वहाँ भोजन की व्यवस्था देखी, बहुत साफ-सुथरा किचन था। जब भोजन में बननेवाले पदार्थों की सूची देखी तो अवाक् रह गये। सवेरे नाश्ते में अंडे की बनी वस्तुएँ दी जाने की व्यवस्था थी। वे शुद्ध शाकाहारी थे। वहाँ की व्यवस्थापिका से मिले, अपनी समस्या बतलाई। व्यवस्थापिका ने सहज में कहा—'आप क्यों परेशान होते हैं, एक सप्ताह में सब ठीक हो जाएगा।' अर्थात् सप्ताह भर में अब तक के संस्कार समाप्त हो जाएँगे। सुनकर वे काँप उठे। बिना भर्ती किये लड़की को वापिस ले आये। शिक्षा से संस्कार अधिक आवश्यक हैं। ज्ञान कम आयेगा तो चलेगा, संस्कार चले गये तो जीवन ही चला जाएगा।

आज शिक्षा का माहौल बना हुआ है। प्रत्येक माता-पिता अपनी संतान को शिक्षित करना चाहते हैं। आजकल की शिक्षा भी आजीविकोन्मुखी है, अध्यात्ममुखी नहीं है, अत: आवश्यक है—अध्यात्म, दर्शन, त्याग, सहिष्णुता, चरित्र की शिक्षा बच्चों को अलग से दी जाए। धर्म का ज्ञान, तत्त्व, इतिहास का ज्ञान व्यवस्थित करवाया जाए। इस हेतु ज्ञानशाला का प्रयोग अत्युत्तम है।

"परम पूज्य आचार्य श्री तुलसी ने बाल पीढ़ी को संस्कारी बनाने हेतु ज्ञानशाला का एक आयाम प्रदान किया। गुरुदेव का ज्ञानशाला रूप सपना आज शतशाखी होकर फलदायी बना है। आचार्य श्री महाश्रमण की असीम कृपा दृष्टि ज्ञानशाला को सतत प्राप्त है। सबके सहयोग से ज्ञानशाला के निखरे स्वरूप को देखकर हर किसी को सात्विक प्रसन्नता होती है। ज्ञानशाला रजत जयन्ती वर्ष का प्रसंग संख्यात्मक व गुणात्मक अभिवृद्धि का कारक बने।"

बुद्धि के साथ हृदय का मेल हो

मुनि मदन कुमार

चीन में एक कुआँ था, जिसके चारों ओर मुँडेर नहीं थी। अँधेरे में कोई उसमें गिर गया। थोड़ी देर बाद उधर से बौद्ध भिक्षु निकला। कुएँ से आवाज आई, वह सहायता के लिए चिल्ला रहा था—''मुझे बचाओ, मुझे निकालो।'' बौद्ध भिक्षु बोला—''अपने-अपने कर्म हैं। कर्मों का फल सबको ही भोगना पड़ता है। यदि मैं तुम्हें निकाल लूँ तो पता नहीं तुम बाद में क्या करोगे? तुम्हारे कर्मों का बोझ मेरे सिर पर जायेगा। मैं इस झंझट में नहीं पड़ने वाला हूँ।'' वह अपना दृष्टिकोण बताकर चला गया। थोड़ी देर बाद कन्फ्यूशियस का शिष्य उधर से गुजरा और उसने भी सहायता की अपील सुनी। वह बोला—''राज्य की व्यवस्था ठीक नहीं है। जो राज्य मुँडेर नहीं बना सकता है, उसे सत्ता में रहने का नैतिक अधिकार नहीं है। राज्य मुँडेर नहीं बना सका है, इसके लिये मैं बगावत करूँगा। व्यवस्था ठीक करो। हमारा राजा अक्षम है।'' कुएँ में गिरा हुआ व्यक्ति बोला—''मुझे पहले बाहर निकालो। मैं मर रहा हूँ।'' पर वह सिद्धांत की चर्चा कर चला गया। इतने में तीसरा व्यक्ति आया, वह ईसाई फकीर था। उसने रस्सा डालकर उसे निकाल दिया। कुएँ से निकालने के बाद वह बोला—''तुम सही आदमी मिले जो मुझे निकाल लिया।'' उसने पूछा—''आप रस्सी साथ में ही रखते हो क्या?'' फकीर ने कहा—''जी हाँ। हमारा काम सेवा का है। कोई गिरे, उसे बचायें। कोई मदद माँगे, उसकी हम सहायता करें।''

प्रथम दो व्यक्ति बुद्धिवादी थे, वे कर्त्तव्य-पालन नहीं कर रहे थे। तीसरा व्यक्ति बुद्धि के साथ मानवीय संवेदना से परिपूर्ण था। उसने कर्त्तव्य को अधिमान दिया।

बुद्धि एक ऐसी रेखा है जो करणीय और अकरणीय के बीच विभेद उत्पन्न करती है। बुद्धि महत्त्वपूर्ण है। बुद्धि के अभाव में कोई बड़ा काम नहीं हो सकता। ''बुद्धिर्यस्य बलं तस्यं'' यानि जिसके पास बुद्धि है, उसके पास बल है। महामना आचार्यश्री भिक्षु ने कहा था—''मैं उस बुद्धि को अच्छा मानता हूँ, जिससे चैतन्य का विकास हो सके। वह बुद्धि मेरे लिये ग्राह्य नहीं है, जो कर्म-बंधन में निरत हो।''

चेतना के विकास में इन्द्रिय और मन के साथ बुद्धि भी जरूरी है। बुद्धि से ही निर्णय लिया जाता है। प्रेक्षा प्रणेता आचार्यश्री महाप्रज्ञ के शब्दों में—''कर्त्तव्य, अकर्त्तव्य आदि का जो भी निर्णय लेना होता है, वह बुद्धि के द्वारा होता है। इसलिए बुद्धि का बहुत महत्त्व है।'' मनुष्य को धन के साथ बुद्धि की भी जरूरत है। कोई भी बुद्धिहीन या मूर्ख नहीं होना चाहता। जो बुद्धिमान है, उन्हें और ज्यादा बुद्धिमान बनने की लालसा है। जो बुद्धि से कमजोर हैं, उन्हें भी बुद्धि चाहिए, निर्बुद्धि किसी काम का नहीं होता। ''निर्बुद्धेस्तु कुतो बलं?'' यानि बुद्धिहीन में बल कहाँ? बुद्धि का विकास बहुत जरूरी है। ''शुद्धा हि बुद्धि किल कामधेनु।'' शुद्ध बुद्धि कामधेनु है। बुद्धि जब भावों (इमोशन्स) से प्रभावित होती है, उस समय वह सही निर्णय नहीं देती। प्रेक्षाध्यान में कहा है—''धी संपन्नोऽहं स्याम्'' मैं धीसंपन्न बनूँ, बुद्धिसंपन्न बनूँ और शुद्ध बुद्धि से संपन्न बनूँ। आचार्यश्री महाप्रज्ञ की दृष्टि में बुद्धि को शुद्ध रखने का सबसे अच्छा उपाय है—वर्तमान में जीना। भाव क्रिया और भाव शुद्धि से बुद्धि शुद्ध रह सकती है।

बाहुबल और धनबल से बुद्धिबल श्रेष्ठ माना जाता है, मगर इससे भी श्रेष्ठ आध्यात्मिक बल है। श्रुत-संपन्नता के साथ शील-संपन्नता जरूरी है। वर्तमान में शिक्षा के साथ शील का संबंध नहीं है। एकांगी बौद्धिक विकास न हो। बौद्धिकता अपर्याप्त है, जीवन-रथ को केवल बौद्धिकता से नहीं चलाया जा सकता है। दिल्ली विश्वविद्यालय में 14 दिसम्बर, 1987 को आचार्यश्री तुलसी के पावन सान्निध्य में आयोजित श्रुतोत्सव कार्यक्रम में उपकुलपति डॉ. गंगराडे ने कहा था—''हमें आज की पीढ़ी को बुद्धिजीवी नहीं, बुद्धिमान बनाना है।'' मूल बात यह है कि बुद्धि के साथ अन्तर्दृष्टि जरूरी है, तभी जीवन में अहिंसा और नैतिकता की बात समझ में आ सकती है। आज नैतिकता का अकाल क्यों? कोरा बौद्धिक विकास हो रहा है, अध्यात्म और करुणा का विकास नहीं हो रहा है। कोरी बौद्धिकता समस्या है पर भावनात्मक विकास होने पर संतुलन स्थापित हो सकेगा। आचार्यश्री महाप्रज्ञ ने कहा था कि जीवन द्विआयामी होना चाहिए, यानि बौद्धिक चेतना और पवित्र चेतना का समन्वित रूप।

अहंकार और बुद्धि समस्या पैदा करने वाले हैं। अहंकार ने बुद्धि से कहा—अनुभव को मत जगाओ। उसके जाग जाने पर, न मैं रह पाऊँगा, न तुम रह पाओगी और न फिर संसार ही रह पायेगा।

अहंकारो धियं ब्रूते, नैनं सुप्तं प्रबोधय।
उदिते परमानन्दे, नाहं न त्वं न वै जगत।।

आज स्थिति यह है कि अनुभव सोया है और बुद्धि जाग रही है। आज अनपढ़ मूर्ख हैं और पढ़े-लिखे मूर्ख भी हैं। बुद्धि के साथ अनुभव चाहिये, भावनात्मक स्वास्थ्य भी चाहिये। राष्ट्रसंत आचार्य श्री तुलसी ने कहा था—''बुद्धि के एक छोर पर अहंकार की सत्ता है तो दूसरे छोर पर विवेक का साम्राज्य है। यदि बुद्धि में अहंकार की सत्ता को चुनौती देने का साहस जाग जाये तो जीवन की अनेक विकृतियों का लोप हो सकता है।''

बुद्धि समस्या भी है और समाधान भी है। इसे दृष्टांतद्वय से समझ सकते हैं। एक मित्र ने कहा—''मेरी पत्नी किसी भी विषय पर घंटों बोल सकती है।'' दूसरे मित्र ने कहा—''पर मेरी पत्नी को तो विषय की भी जरूरत नहीं होती।'' यह असंयम और अविवेक की स्थिति है तथा समस्यामूलक है।

जटिल परिस्थिति को भी विनोद में बदला जा सकता है और तनाव को घटाया जा सकता है। पत्नी ने रुष्ट होकर कहा—''मैं पीहर चली जाऊँगी।'' मजाक के मूड में उतरे पति ने कहा—''बहुत अच्छी बात है। तुम पीहर चली जाओ। मैं अपने ससुराल चला जाऊँगा और बच्चों को उनके ननिहाल भेज देंगे।''

बुद्धि हमारा आत्मिक गुण है और क्षयोपशमजन्य है, अत: वह निरवद्य की कोटि में है। बुद्धि का प्रयोग अच्छा और बुरा तथा सावद्य और निरवद्य दोनों हो सकता है।

जीवन निर्माण का आधार सद्संस्कार

साध्वी डॉ. कुन्दनरेखा

भारतीय संस्कृति सद्संस्कारों की जन्मदात्री है। इन्हीं संस्कारों की बदौलत भारत विश्व गुरु कहलाया। भारत के कण-कण में आज भी सद्संस्कारों की सुगंध ली जा सकती है। सेवाभावना, सहनशीलता, श्रमशीलता, सज्जनता और सहयोगधर्मिता जैसे मानवीय गुण इस देश की पहचान हैं। वास्तव में जीवन निर्माण में संस्कारों का अत्यधिक योगदान होता है। जीवनयापन करने हेतु गुणों का सिंचन भी संस्कार कहलाता है। इस वसुंधरा पर वेद की ऋचाएँ पढ़ी जाती थीं। आगम-सबूतों द्वारा आत्म-मंथन किया जाता था। गीता की गूँज जीवन को झंकृत कर देती थी। इसी से प्रभावित होकर माता सुनीति ने अपने पुत्र ध्रुव को अपनी उदात्त भावना एवं धीरता से युक्त मधुर वचनों से संस्कारित किया था। बालवय में अतिमुक्तक कुमार ने संयम के महापथ पर चलते हुए अपने अस्तित्व को पहचाना था। गजसुकुमाल एवं मेघ कुमार जैसे बच्चों ने अपनी मंजिल को पाया था।

वास्तव में सद्संकल्पों का मार्ग अतिलुभावना एवं मनोहारी है, जिस पर चलकर निरहंकारिता, विनम्रता, मृदुता, ऋजुता, समर्पण जैसे उच्च भावों को प्रशस्त किया जा सकता है। प्रश्न यह है कि संस्कारों का बीजारोपण कब किया जाये? एक बार दार्शनिक संत सुकरात से एक महिला ने पूछा—बच्चों को संस्कार देने का वक्त कौन सा होता है? सुकरात ने कहा—मैं जानना चाहता हूँ कि तुम्हारा बालक कितना बड़ा है। उसने तपाक से कहा—पाँच वर्ष का। लम्बा श्वास लेते हुए दार्शनिक बोले—बहुत देर हो गई है। महिला को आश्चर्य हुआ और पूछा—कैसे? उन्होंने सहज भाव से कहा—गर्भावस्था इसके लिए सबसे उपयुक्त समय था। अर्थात् संस्कार देने से पूर्व संस्कारदाता उससे संस्कारित हो, जरूरी है। तभी तो माँ रूद्रसोमा ने अपने पुत्र आर्यरक्षित को पूर्वों का ज्ञान करने हेतु प्रेरित किया था, जिसकी निष्पत्ति थी संयमपूर्ण जीवन। शुद्धोऽसि, बुद्धेऽसि, निरंजनोऽनि जैसी अध्यात्म लोरियाँ मदालसा जैसी माँ ही सुना सकती है, जिसके परिणामस्वरूप बच्चों की सुप्त चेतना को जगाया था। गोपीचंद का जीवन त्याग का सच्चा राही सद्संस्कारों के कारण ही बना था, यह सबको विदित है।

राष्ट्र का भविष्य हैं बच्चे, जो एक समय बाद स्वर्णिम भविष्य को पैदा कर अपने देश को बुलन्दियाँ दे सकते हैं। शांतिदूत आचार्य महाश्रमण की अहिंसा-यात्रा का उद्देश्य भी तो यही है। अहिंसा, सद्भावना और नैतिकता जैसे कल्पवृक्षों के तले कुछ भी पाना अवशेष नहीं रहता। बाल-मानस ऐसे संस्कारों के लिए सक्षम है, हकदार है, जिनकी उर्वरा भूमि पर गिरने वाला गुणात्मक बीज अवश्य फलवान होगा। यही वह शक्ति है, जिससे महानता हासिल होती है। मोहनदास कर्मचन्द गाँधी से महात्मा गांधी तक का सफर चाहे कष्टों से भरा था, पर सही था, जिस पर चलते हुए उन्होंने न केवल भारत को गुलाम मुक्त किया बल्कि अपनी संयमित जीवन चर्चा से सबके चहेते बन गये।

अस्तित्व की पहचान सद्संस्कारों के निर्माण की ही शान है। माता-पिता, अभिभावक, आध्यात्मिक गुरु एवं अध्यापकों/ शिक्षकों का दायित्व है कि वे बच्चों को संस्कारों से सुसज्जित करें। बच्चों की सरलता इतनी जाहिर है कि किसी भी वक्त उनमें संस्कारों को पुष्ट किया जा सकता है वे माता-पिता गुनहगार हैं, जो अपनी स्वार्थपरक जीवन शैली के चलते बच्चों को गौण कर देते हैं। अपने स्टेटस के खातिर बच्चों के प्रति लापरवाही भविष्य में क्या रंग दिखा सकती है? अनुमान लगायें, तब ही हर अभिभावक सजग बनेगा। किट्टी पार्टियों का क्षणिक आनन्द, पिकनिक पर जाने का अल्पसुख तथा शॉपिंग, ब्यूटीपार्लर में टाइम लगाने के मायने कितने भारी पड़ सकते हैं, इतना चिंतन करने वाले माता-पिता अपने बच्चों के साथ वफादारी से पेश आयें और बच्चों को सुघड़ बनायें। भर्तृहरि ने भी कहा है—

येषां न विद्या न तपो न दानं, ज्ञानं च शीलं न गुणो न धर्मः।
ते मृत्युलोके भुवि भार भूताः, मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति।।

मनुष्य संस्कारविहीन जीवन जीता हुआ जिंदगी का केवल भार ढोता है, आनन्द नहीं उठा पाता। अनादिकालीन स्वच्छ परम्परा में पाश्चात्य संस्कृति ने अपना जाल फैलाते हुए मानव को गुमराह बनाया है। यही कारण है कि सद्संस्कारों की लहलहाती पौध मुरझाती जा रही है। सदाचरण का स्वच्छ नीर

सूखता जा रहा है। मानवीय मूल्यों पर कुठाराघात हुआ है। व्यसन-फैशन में शुमार हो इंसान को बेभान बना रहे हैं। दूरदर्शन में प्रदर्शित तथ्यों ने इन्सानियत को उग्र बनाया है। संवेदनहीनता की वृद्धि इसी की देन है। मनुष्य इच्छाओं का दास बनता जा रहा है। येन-केन-प्रकारेण मनचाही पदार्थों की ललक ने उसे सत्य से दूर किया है। मोबाइल, इंटरनेट के तारों से जुड़ा इंसान मैत्री, करुणा, प्रेम जैसे शब्दों और भावनाओं को भूलता जा रहा है, जिसके चलते आये दिन हिंसा, अपहरण, चोरी, डकैती आदि वारदातों को अंजाम मिल रहा है। चारों तरफ दहशत का माहौल है। कुसंस्कारों के काँटों की असहनीय चुभन होने पर भी स्टेटस के पीछे भागने की रफ्तार धीमी नहीं हो रही है। दुर्व्यसनों की मार ने उसे केवल सड़कपति ही नहीं बनाया, जीवन को भी खोखला बना दिया है। दुर्जनों की संगति जलते हुए कोयले की तरह जलाने वाली होती है। ये सब कुछ बच्चों को सही वक्त पर समझा दिया होता तो हमें इस दौर से नहीं गुजरना पड़ता, जो वर्तमान में देख रहे हैं।

इसके अतिरिक्त आज भी यदि अभिभावक सजग हो जायें तो बच्चे भविष्य के कर्णधार बन सकते हैं। छोटी सी भूल, छोटी सी लापरवाही कहीं किसी जीवन को बर्बाद न कर दे, अवश्य ध्यान दें। इसके लिए जरूरी है सजगता, सावधानी एवं समझदारी बरतें, ताकि नया जीवन दर्शन देकर आने वाली पीढ़ी को सत्य की महक दे पायें। बालक-मन की उर्वरा भूमि में उपयोगी एवं मनमोहक बीजों का रोपण करें ताकि आनन्द और शान्ति के मोती निपजाये जा सकें। करणीय एवं चिन्तनीय निम्न बिन्दुओं को आधार बनाया जा सकता है ताकि हर माँ-बाप का अपने घर को स्वर्ग बनाने का सपना फलीभूत हो सके। पुरुषार्थ, श्रम एवं विवेकपूर्ण चिंतन से नये समाज की कल्पना साकार हो और विश्व में नये सूर्य का उदय करे और देश को रोशन कर सके।

सर्वप्रथम संस्कारदायक अभिभावक खुली किताब की तरह पेश आयें। लुकाव-छिपाव जैसे शब्दों का कोई मोल न रहे तो बच्चों को सहज संस्कारों का आलोक बाँटा जा सकता है। इसके लिए आवश्यक है संस्कार की पृष्ठभूमि में मित्रता का व्यवहार हो ताकि हर होने वाली गलतियों को आसानी से शेयर कर सकें और गलतियों की ग्रंथियाँ जानने न पायें। साहस, निर्भीकता को बढ़ाने वाली कहानियों का सहारा बच्चों के दिलों पर अमिट छाप छोड़ सकता है, भूलें नहीं, उन नौनिहालों के लिए समय अवश्य निकालें। शब्दों में मिठास घोलना जरूरी है, ताकि मधुर वचनों से मधुरता का महत्व समझें। कवि ने ठीक कहा है—

''छुरी का, तीर का, तलवार का तो घाव भरा,
लगा जो जख्म जुबाँ का, रहता हमेशा हरा।।''

दुर्व्यसनों में फँस कर कितना नुकसान हुआ है, होता है, समझाने की सतत चेष्टा करें, ताकि जीवनपर्यंत इनकी बुरी लत से बचे रहें।

'क्षमा वीरस्य भूषणम्' क्षमा करने वाले महान होते हैं। समाज के परिवेश में कोई भी इंसान क्षमा जैसे गुण को आत्मसात कर बुलन्दियों को छू सकता है। आने वाली कठिनाइयों को परास्त कर आगे बढ़ जाता है।

सहनशीलता प्रत्येक परिस्थिति का कंट्रोलर यंत्र है। जीवन में आने वाली विपत्तियाँ उस इंसान के सामने टिक नहीं सकतीं, जो सहनशीलता के बोधपाठ से संस्कारित है। ऐसा इंसान न ठोकर लगने पर चिल्लाता है और न हि काँटों की चुभन से रास्ता बदलता है? 'दु:ख' ऐसे महाव्यक्तित्व के सम्मुख नदारद हो जाते हैं।

उत्तेजना, आवेश और आवेग विभाव हैं, जो आन्तरिक ऊर्जा को नष्ट कर देते हैं। इनके प्रभावी रहने पर सफलता संदेहास्पद बन कर रह जाती है इसलिए 'कषाय उपशमन' पर ध्यान दें।

गलतियों का अहसास अवश्य करवायें, पर डाँट कर नहीं, वात्सल्य का दरिया उड़ेलते हुए, ताकि बच्चों के कोमल दिल पर आघात भी न हो और वह उस गलती को पुन: दोहराये भी नहीं।

सचमुच बातों ही बातों में प्रतिबोध देने वाले अभिभावक अपने बच्चों के सच्चे पथ-दर्शक बन पाते हैं। एक बच्चा रात्रिकालीन समय में आकाश की तरफ निहारता जा रहा था। उसकी माँ ने पूछा—आकाश में क्या देख रहे हो बेटे। माँ मैं तारे गिन रहा हूँ, लेकिन गिने नहीं जा रहे। माँ ने समय को पहचानते हुए बच्चे को कहा—बेटा! तारे गिनने के लिए नहीं होते बल्कि इनसे प्रेरणा लेनी चाहिये कि तारों की तरह सदैव प्रकाशवान बनो? बच्चे को एक नया संदेश मिल गया।

जीवन समस्याओं से संकुल भी है, समाधान चाहिये। उन्हें केवल किताबों एवं तकनीकों के जरिये नहीं खोजा जा सकता, बल्कि स्वयं से जुड़ें। आत्म-दर्शन से प्राप्त समाधान शाश्वत के द्वार खोल देता है।

उपर्युक्त संस्कारों का दस्तावेज बच्चों के साथ जन्मघूंटी के साथ सतत देने का प्रयास करें ताकि जीवन महल के निर्माण में संस्कारों की एक-एक ईंट वज्र बनकर उसकी सुरक्षा भी करे और मंजिल का पथदर्शक भी बने।

अस्तु! संस्कारों की सोपान जीवन के अरमानों तक ले जाती है। व्यक्तित्व को निखारती है। परिवार में खुशहाली आती है। सामाजिक गतिविधियों में चार चाँद लगा देती है और देश को उन्नत एवं मजबूत बनाती है। तभी तो कहा है—

जीवन निर्माण का आधार सद्संस्कार है,
स्वयं को सँवारने का सुन्दर संसार है,
हमेशा याद रखें संस्कारों की पौध फलती है जब,
सब जगह होती जय जयकार है।।

संस्कार देते हैं जीवन को आकार

मुनि अनंत कुमार

जीवन में हर कोई आगे बढ़ना चाहता है। दिन पर दिन सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ते जाना और छू लेना उस मंजिल को, जो सबसे ऊपर हो। सबका बस! इतना-सा ही ख्वाब होता है।

परन्तु इस ख्वाब को कितने लोग पूरा कर पाते हैं?

सबसे ऊपर वाली मंजिल को कितने लोग छू पाते हैं?

थोड़े ! बहुत थोड़े ! बहुत से भी बहुत थोड़े।

उन बहुत से भी बहुत थोड़ों में एक गुण समान रूप से पाया जाता है। वह गुण है—बचपन में सद्संस्कारों की प्राप्ति !

संस्कार का जीवन में बहुत महत्व है। संस्कार के बिना जीवन ठीक वैसे ही है जैसे जल के बिना दरिया। सद्संस्कारों की प्राप्ति दुर्लभ है, यदि प्राप्त हो जाये तो उसे बनाए रखना कठिन होता है।

संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं, उनमें से एक भी ऐसा नहीं था, जिन्होंने संस्कारों के बिना जीवन जीने की कल्पना भी की हो। उनके लिये संस्कार सर्वोपरि थे। वे संस्कार को सबसे अधिक महत्व देते थे।

शेक्सपीयर ने कहा है—''प्रत्येक कार्य के पीछे उनके भीतर निहित संस्कारों की प्रेरणा होती है। संस्कारों के अनुसार ही व्यक्ति के बोलने-चालने, देखने का ढंग भी होता है। जैसे संस्कार होंगे, वैसा विचार बनेगा। जैसा विचार होगा, वैसा चरित्र होगा और वैसा ही व्यक्तित्व बनेगा। व्यक्तित्व रूपी साँचे में ढलकर ही मनुष्य जीवन जीता है।

यह सत्य है कि बच्चों के जीवन निर्माण में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका माता-पिता की होती है।

आधुनिक शोधकर्त्ता कहते हैं कि बच्चों के जीवन निर्माण में 30 प्रतिशत भूमिका वातावरण व अन्य घटकों की और 70 प्रतिशत भूमिका माता-पिता की होती है। इसलिये कहा भी गया है कि बच्चों को जन्म देने वाले और सम्पत्ति देने वाले माँ-बाप जल्दी भुला दिये जाते हैं, जबकि संस्कारों की दौलत देने वाले सदा याद किये जाते हैं।

बच्चों का अपने जीवन में रोल मॉडल अधिकतर अपने अभिभावक ही होते हैं। खुद माँ-बाप, बच्चों के लिये धन संचय करने में लगे रहते हैं ''संस्कार नहीं''। उनको यह उक्ति सदैव याद रखनी चाहिये कि पूत-सपूत तो क्यूँ धन संचै, पूत कपूत तो क्यूँ धन संचै?

बालक बचपन से ही जैसा व्यवहार, विचार अपने अभिभावकों का देखता है, अज्ञात रूप में उसके अवचेतन मन पर वह प्रभाव डालते रहते हैं। एक आदमी ने अपने मित्र से कहा— आपने बड़ी मूर्खता की। उसने कहा—क्यों? क्या हुआ?

कम उम्र बताकर आप अपने बेटे को आधे टिकिट में प्रवास करवा सकते थे। किन्तु ऐसा करने से मुझे क्या मिलता? अरे आपकी बचत होती। बचा-बचाकर कितने रुपये बचते? सौ रुपये। मुझे नहीं बचाने थे। क्या कोई कारण?

कम उम्र बताकर रुपये बचाने के बदले मुझे अपने बेटे को बचाना अधिक उचित लगा। आप क्या कहना चाहते हैं? मुझे अपने बेटे के संस्कारों को बचाना था। उसको पता था कि उसकी उम्र पूरा टिकिट लेने की सीमा में है। तथापि यदि मैं उसकी उम्र कम बताता तो सम्भव है, मेरे द्वारा उसे दिये गए 'सदा सत्य बोलो', 'सत्यमेव जयते' आदि संस्कारों का क्या होता? कहते हैं साँप ज्यादा से ज्यादा क्या करता है? डंस देकर चला जाता है। कुत्ता काटकर भाग जाता है और गधा लात मारकर गिरा देता है, पर गलत संस्कार, कुसंस्कार हमारे जीवन के शील, सदाचार और सद्गुणरूपी त्रिवेणी का नाश कर देते हैं। भाईसाहब आपके लिये पैसा मुख्य होगा परन्तु मेरे लिये

संस्कार मुख्य हैं और इसीलिये मैंने अपने बेटे की उम्र कम नहीं बताई। इसी भावना को पुष्ट करता हुआ गुरुदेव श्री तुलसी का वचन है कि—

संस्कारों की सम्पदा है, उत्कृष्ट अमूल्य।
धन-वैभव संसार का, रखता है क्या मूल्य।।

किसी विचारक ने जीवन की परिभाषा एक ही वाक्य में करते हुये कहा कि 'जीवन अर्थात् B to D की यात्रा B अर्थात् Birth और D अर्थात् Death अर्थात् जन्म से मृत्यु तक की यात्रा का नाम ही है जीवन है।

B और D के मध्य C आता है यहाँ C का अर्थ है Choose। यदि हमने जीवन और मृत्यु के बीच सही Choose किया तो विनाश पतन भी कर सकता है। क्योंकि जन्म हमारे हाथ में नहीं है मृत्यु हमारे बस में नहीं है पर मध्य में वस्तु-व्यक्ति या घटना को कैसे पसन्द करना हमारे वश की बात है, हमारे हाथ में है और यही तो विवेक है।

जिस बच्चे में विवेक के संस्कार बचपन में पुष्ट बन जाते हैं कि—कैसे बोलना, कैसे खाना, कैसे व्यवहार करना तो वह अपने जीवन में घड़ी के छोटे काँटे की तरह अपना मूल्य बढ़ा लेता है। क्योंकि विवेक वह भाव है, जो हमें विपत्तियों की अभेद दीवारों में मार्ग बनाने देता है, जो जीवन को उजाला देता है, सुन्दर बनाता है, आगे ले जाता है। हम जितने शांत होंगे, उतना ही हमारा विवेक जाग्रत होगा और हमारा कार्य उतना ही अधिक अच्छा होगा।

बस स्टैण्ड पर खड़े किसी व्यक्ति से एक युवक ने पूछा—भाईसाहब टाइम क्या हुआ है? उत्तर मिला—"ऊपर 20"। युवक ने सोचा शायद मुझे ध्यान से सुनाई नहीं दिया है तो फिर से पूछा—टाइम क्या हुआ तो उत्तर मिला—"ऊपर 21"। युवक विचार में पड़ गया कि शायद उन्होंने मेरी बात सुनी नहीं है। वापिस कहा—टाइम क्या हुआ? उत्तर मिला—"ऊपर 22"। भाईसाहब आप मजाक क्यों कर रहे हैं? आप स्पष्ट जवाब क्यों नहीं दे रहे हैं? मैं स्पष्ट ही तो कह रहा हूँ ऊपर 20, 21, 22.....। क्या ये जवाब स्पष्ट है? 'जी'। बताइए कैसे स्पष्ट है? देखिए आपको एक सत्य बात कहूँ? मैंने घड़ी अवश्य पहनी है पर इस घड़ी में केवल मिनट का बड़ा काँटा है, घण्टे का काँटा है ही नहीं।

बस यही स्थिति जीवन की है। घड़ी में बड़ा काँटा है छोटा नहीं है तो उसकी कोई कीमत नहीं है। वैसे ही जीवन में सफलता है पर संस्कार नहीं है, पैसा है पर प्रसन्नता नहीं है, पद है पर प्रेम नहीं है तो जीवन का कोई मूल्य नहीं है।

संक्षिप्त में अभिभावक बालक को कार दें या न दें संस्कार अवश्य दें।

संसाधन दें या न दें पर समय जरूर दें।
सम्पत्ति दें या न दें पर सन्मति निश्चित दें।
सत्ता दें या न दें पर स्नेह अविलम्ब दें।
विज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश करायें या न करायें,
सम्यक ज्ञान में प्रवेश अवश्य करायें।
सुविधा से रहना सिखायें या न सिखायें,
संयम से रहना जरूर सिखायें।
व्यवहारशील बनायें या न बनायें,
विवेकशील निश्चित बनाएँ।
केशलैस के फायदे बताएँ या न गिनायें
क्लेशलेश रहने के फायदे अविलम्ब बताएँ।

कैसा हो कौशल?

मदनलाल बेंगाणी

एक ओर फूहड़पन,
एक ओर कौशल।
एक है कुंड का पानी,
एक है कुएँ का जल।
सोचें-समझें,
किसमें आकर्षण?
आँकें-झाँकें,
कौन है दर्पण?
कौशल की कितनी कीमत?
बदल देती किस्मत
स्वागत ही स्वागत,

बरकत ही बरकत।
लाते रहें चार चाँद,
बिना कोई कूद-फाँद।
कुप्पा न बनें फूलकर,
न करें कोई अभिमान।
दुनिया में,
एक से एक बढ़कर,
कद्र करें जो श्रेयस्कर,
प्रणत बनें झुककर।

अनिष्ट की न आये सोच,
जरा भी न उपजे रोष।
भीतर का वह कौशल,
अंतर रहे अमल।
ईर्ष्या-जलन का
काटे न खटमल।
मन बने निश्छल,
जैसे कीचड़ में कमल।
निर्मल से निर्मल
जैसे बहती नदिया का जल।
ऐसा हो कौशल।

विजय यात्रा के हमसफर

डॉ. साध्वी सरलयशा

किसी भी उम्र के शख्स को बेहद सुकून देने वाला लब्ज है—सफलता-विजय। यह वो रसद है जो व्यक्ति के भीतर अपूर्व ऊर्जा का संचार करती है। परिवेश भले शिक्षा का हो या व्यापार का अथवा इंटरव्यू में स्वयं को साबित करने का। जिंदगी के आशियाने पर अंकित होने वाली छोटी-छोटी सफलताएँ कामयाबी का हौंसला बुलंद करती हैं। इसका आदर्श मॉडल है राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का जीवनवृत्त, जिन्होंने भारत की आजादी को एक हासिए से शुरू किया और काबिज होते हुए देश को अहिंसा की राहों पर अखण्ड आजादी का उपहार दिया। जो पूरे मुल्क के लिए जादूई फक्र वाली घटना थी। इस कदर सिलसिलेवार सफलता की तर्ज पर लिखा गया विजय आलेख वैश्विक राजनीति का स्वर्णिम दस्तावेज बन गया।

सफलता और विजय में गहरा तालुकात है। चूँकि एक स्टेज पर पहुँचकर सफलता ही विजयश्री का वरण करती है। पृष्ठभूमि के बतौर मुखर है व्यक्तित्व को तराशने और निखारने वाली कड़ी कसौटी। विजय यात्रा के सफर को आसान बनाने वाली मौलिक उसूलों का मनन लाजिमी है। प्रस्तुत संदर्भ में कतिपय अहं बिन्दुओं का विमर्श जायज होगा।

फौलादी आत्मविश्वास...

सफलता की प्राणवान सरणी है आत्मविश्वास। फौलादी आत्मविश्वास के जरिए पत्थर पर सुमन, चट्टान से निर्झर और सघन बीहड़ से राजमार्ग निकाला जा सकता है। इसके जरिए अपने भीतर में निहित क्षमता-अर्हता का आकलन सुगमता से हो सकता है। यह वो भावना है जो हमारे भीतर अपूर्व शक्ति की तरंग पैदा करती है। अपने इर्द-गिर्द के परिवेश में यदा-कदा अक्षमता का स्वर सुनाई देता है। ''काश! हमारे में ये क्षमता होती तो हम भी कुछ नया करके दिखलाते। पर हमारे में कार्य करने की शक्ति ही नहीं है।'' इस कदर निराशा से कुण्ठित लोग अपनी ही सफलता पर प्रश्नचिह्न खड़ा कर देते हैं। जाहिर है इच्छाशक्ति कमजोर, मन:स्थिति नाजुक और इरादे मजबूत न हों तो विश्वास बल नहीं पकड़ पाता।

दूसरी ओर जिसके भीतर कार्य कौशल की शक्ति है या नहीं पर फौलादी आत्मविश्वास से सराबोर है तो वह निश्चित ही लक्ष्य को पा लेता है। आत्मविश्वास से लबरेज के लिए असंभव जैसा कुछ नहीं होता। माना कि विशाल समुद्र को पार कर लंका पहुँचने की क्षमता वीरबली श्री हनुमान में विद्यमान थी पर उसे

झनझनाने और जगाने वाले जामवंत की भूमिका भी कम नहीं आँकी जा सकती। स्पष्ट है आत्मविश्वास को जगाने वाले का सुयोग जरूरी है। सौभाग्य से हमारे गुरुजन, पूज्यजन अपनी अमूल्य शिक्षाओं से हमें आत्मायित करते हैं। आत्मविश्वास में इजाफा करने वाली ये प्रेरक पंक्तियाँ मानस पटल को सरसाती हैं—

''जीत विश्वास की होती है, संशय के डेरे की नहीं,
जीत आस की होती है, निराशा के घेरे की नहीं।
आस और विश्वास पर ही टिकी है दुनिया,
जीत प्रकाश की होती है निराशा के घेरे की नहीं।।''

जुनून भरे इरादे

सफलता की डगर दृढ़ इच्छाशक्ति पर निर्भर करती है। हर कोई अपने मिशन में विजयी बनना चाहता है पर इच्छाशक्ति कमजोर होने से मंजिल की कठिनाइयाँ गति को कुंठित बना बैठती हैं। इसके विपरीत जिसकी नस-नस में लक्ष्यभेदी जुनून समाया हुआ है समझो उसकी विजय सुनिश्चित है। अक्सर ऐसे लोगों को धुनी भी कहा जाता है। धुन के पक्के व्यक्ति कठिन को आसान, असंभव को संभव में तब्दील करने का माद्दा रखते हैं। पुष्टि में शायर की सटीक पंक्तियाँ हैं—

''मंजिल उन्हीं को मिलती हैं, जिनके सपनों में जान होती है।
परों से कुछ नहीं होता, हौसलों से उड़ान होती है।''

बुलंद हौंसलों के साथ किया गया दृढ़ संकल्पपूर्वक सही दिशा का प्रयत्न सफलता का नियामक बनता है। विजय मेरी ही होगी और उस विजय को पाने के लिए मैंने दृढ़ निश्चय कर दिया है। अपने इस जुनून की बदौलत सामान्य स्थिति वाले 'हीरेस मेनार्ड' ने कॉलेज में प्रवेश पाते ही दरवाजे पर 'वि' अंकित करना शुरू कर दिया। ऐसा करते हुए एक दिन उसने विजय के सफर को तय कर ही लिया।

विराट हेतु स्वार्थ का अर्घ्य

आत्मोपलब्धि अथवा देशभक्ति का जुनून व्यक्ति के भीतर अपूर्व संयम-त्याग और बलिदान का भाव गहराता है। विराट के लिए निजी स्वार्थ के त्याग का उपनय वाकई में प्रेरणा भरता है। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू स्वतंत्रता संग्राम के दौरान कई बार जेल में रहे। यकायक उनकी पत्नी गंभीर रोग से पीड़ित हो गईं। जायज था कि नेहरू जी अपनी देखरेख में पत्नी का इलाज विदेश में करवाएँ। पर उन दिनों वे जेल में थे। लोगों ने ब्रिटिश सरकार से अनुरोध किया कि उन्हें रिहा कर दें ताकि वो पत्नी का इलाज करा सकें।

ब्रिटिश सरकार ने शर्त रखी कि नेहरू स्वयं पैरोल के बाबत प्रार्थना-पत्र दें। साथ ही इस दौरान राजनीतिक गतिविधियों से दूर रहने का वचन दें। जब श्रीमती कमला नेहरू को यह खबर मिली तो उन्होंने भावपूर्ण शब्दों में पत्र लिखा—'देश के आत्मसम्मान के विरुद्ध किसी भी शर्त को न मानें। क्योंकि देश का आत्मसम्मान उनके प्राणों से अधिक मूल्यवान है। पत्र की हिदायत का नेहरूजी ने तहेदिल से स्वागत किया। बेशक श्रीमती कमला नेहरू ने स्विट्जरलैण्ड के एक हॉस्पीटल में दम तोड़ दिया, पर देशहित व अद्‌भुत त्याग का संदेश आज भी जीवित है। नेहरू जी ने जेल की कोठरी में धर्मपत्नी को श्रद्धांजलि अर्पित कर आत्मतोष के साथ गर्व का अनुभव किया।

पुरुषार्थ की प्रज्वलित लौ

व्यक्ति असीम क्षमताओं का पुञ्ज है। पर वे तब तक जागृत नहीं होतीं जब तक उन्हें प्रखर पौरुष की छैनी से झनझनाया न जाये। माना कि हीरे-पन्ने जवाहरात, सोना आदि कीमती धातुएँ धरती माँ की गोद में होती हैं, पर क्या उन्हें बिना श्रम किए पा सकते हैं? यदि बिना श्रम के सुगमता से मिलते तो सभी बटोर लेते। पर ऐसा कदापि नहीं होता। उन्हें पाने के लिए कड़ा प्रयत्न करना पड़ता है। दक्षिण भारत के छोटे से कस्बे केजियफ में सोने की खदान को देखा। बताया गया कि उसमें हजारों फीट नीचे जाने के बाद जीवन को जोखिम में डालकर दक्ष वर्कर उसे बड़ी सावधानी से ऊपर लाते हैं। पर वह शुद्ध नहीं होता। उसमें मिट्टी-पत्थर अन्य कण मिले रहते हैं। जनोपयोगी बनाने के लिए उसे परिश्रमपूर्वक तपन, पिघलन और कसौटी की प्रक्रिया से शुद्ध बनाया जाता है।

सघन पुरुषार्थ के जरिए वांछित हासिल किया जा सकता है। अनगिनत उदाहरणों में एक का उद्धरण इस प्रकार है—फोटोग्राफर की दुकान पर काम करने वाले सामान्य लड़के के हाथ इत्तफाक से ज्योतिष विद्या की पुस्तक लग गई। लड़के ने न केवल उस पुस्तक को पढ़ा ही अपितु अपनी प्रबल जिज्ञासा और कठोर परिश्रम की बदौलत अमेरिका के वैज्ञानिकों में अपनी पहचान बनाई। वह सुप्रसिद्ध नाम है वैज्ञानिक प्रोफेसर बर्नर। उनकी शिद्दत पर ये पंक्तियाँ सार्थक हैं—

''अपना मुकद्दर जो खुद हैं बनाते,
दुनिया उन्हीं की धुरी घूमती है।
मेहनत ही जिनका धरम है करम है,
सफलता उन्हीं के चरण चूमती है।।''

पुरुषार्थ की तर्ज पर विजयश्री को पाने और अपने भाग्य की इबादत को फिर से लिखने वालों के प्रेरक उपनय जिज्ञासु का पथ प्रशस्त करते हैं।

मनन के लिहाजा—

- विजयश्री को पाने के लिए आत्ममंथन जरूरी है।
- सुस्ती को त्यागकर पुरुषार्थ में रंजन जरूरी है।
- मार्गदर्शक की हिदायत पर मनन जरूरी है।
- सतत जागरण की अलार्म जरूरी है।
- मंजिल के ओहदे पर सजगता जरूरी है।

बच्चे परमात्मा की सच्ची सूरत है,
प्यारी लगती सभी को इनकी मूरत है?
मुरझा न जाएँ ये खिलते फूल?
इसलिए सतत सावधानी की जरूरत है।।

बालक बनें सद्संस्कारी

साध्वी मनोज्ञयशा

सुसंस्कारों से ही हमारी संस्कृति जीवित रह सकती है। संस्कारों की जरूरत आज भी है पहले भी थी और भविष्य में भी रहेगी। परन्तु प्रश्न है संस्कारों का पोषण कब करें? जैसे जब घड़ा पक जाता है तो उसे दूसरे आकार-प्रकार में नहीं बदल सकते वैसे ही संस्कारों का बीजारोपण प्रारम्भ से ही शुरू कर देना चाहिए। 9 माह गर्भस्थ अवस्था में, फिर शैशव, फिर बाल्यावस्था तक बच्चों में संस्कार देने चाहिए, क्योंकि इस अवस्था तक बालक पूर्णरूपेण माता-पिता के अनुसार चलना और बाद में कुछ स्वतंत्र चिंतन अपने अनुसार करने लग जाता है। बच्चों के संस्कारों को पुष्ट करने का यही उत्तम समय है। तीन प्रकार के पिता होते हैं— प्रथम वह जो केवल जन्म देता है, दूसरा वह जो अपने पुत्र को संपत्ति देता है, तीसरा वह इन सबके साथ सद्संस्कार देता है। पहले प्रकार का पिता अपने पुत्र के लिए दायित्व का निर्वाह नहीं करता। बच्चे को खुद के भविष्य पर छोड़ देता है। दूसरा पिता उनके लिए लड़ाई-झगड़े की नींव रख जाता है उन्हें आलसी और बच्चों के पैरों को कमजोर कर देता है। उसे उनके बलबूते पर खड़े नहीं होने देता। तीसरे प्रकार का पिता उत्तम पिता है जो पिता के साथ-साथ गुरु का दायित्व निभाता है। बालक के भविष्य को आदर्श बनाता है। क्योंकि संस्कारों का बंधन रस्सी के बंधन से भी मजबूत होता है। "एक भाई 20 ऊँटों को दूसरे गाँव ले जा रहा था। बीच में एक-गाँव में रुके और एक-एक कील गाड़ी और ऊँटों को बैठा दिया, पर एक कील कम पड़ गयी। कील लेने गया परन्तु पास में दूसरा व्यक्ति खड़ा था। उसने कहा मैं बिना कील ही ऊँट को बैठा दूँगा। उसने केवल कील रोपने का दिखावा किया और ऊँट बैठ गया। सवेरे सब ऊँटों की कील से रस्सी खोली और ऊँट उठकर चलने लगे परन्तु वो बिना रस्सी से बँधा उठा नहीं, तो उस दूसरे भाई ने कहा कि पहले खूँटी से खोलो तो। बोला कील तो रोपी ही नहीं फिर क्या खोलना? तब उस दूसरे भाई ने कहा—इसे यही संस्कार हो गये कि मैं खूँटी से बँधा हुआ हूँ अब झूठ-मूठ खोलने की क्रिया करने से ही यह उठेगा। यह है संस्कारों का प्रभाव। बचपन के संस्कारों का असर भी इसी तरह हमारे जीवन को प्रभावित करता है। फिर उसके सामने गलत परिस्थिति भी आ जाए तो असर नहीं करती।

आजकल लोग शिक्षा को ही संस्कार मानते हैं परन्तु शिक्षा का संबंध भौतिक पदार्थों के ज्ञान से है, संसार के ज्ञान से है और बुद्धि को प्रखर करने से है। तरह-तरह की सूचनाएँ प्रखर करने से है। जबकि संस्कारों का संबंध चारित्रिक उत्थान, नैतिक आचरण और मानवीय मूल्यों के संरक्षण एवं विकास से है।

एक अध्यापक ने विद्यार्थियों से पूछा—यदि तुम्हें कहीं हीरा पड़ा मिल जाए तो क्या करोगे? एक ने कहा—बेचकर कार खरीदूँगा, दूसरे ने कहा—बंगला खरीदूँगा, तीसरा बोला—पिता को दूँगा। अध्यापक को संतोष नहीं, वह पूछता गया। एक ने कहा—मैं उसके मालिक को खोजूँगा। अध्यापक ने फिर पूछा— मानो मालिक का पता न हो तब क्या करोगे? तो कहा—उसे बेचकर आधा गरीबों में और आधा सेवा संस्थान में जमा कर दूँगा। ये संस्कार ही आगे उन्हें महान सत्यवादी और देशभक्त 'गोपाल कृष्ण गोखले' के रूप में चमक सका। बच्चों को संस्कारी बनाने के लिए माता-पिता स्वयं उनके सामने रोल-मॉडल बनें, आदर्श कार्य करें क्योंकि बच्चा जैसा देखता है वैसा ही सीख लेता है। बच्चे ने देखा कि सिलाई मशीन खराब, खट-खट आवाज आने पर माँ तेल डालती है तो ठीक हो जाती है। दूसरे दिन उसने दादा जी को खर्राटे भरते देखकर उनके नाक और मुँह में तेल की बूँदें डाल दीं ताकी आवाज शान्त हो सके। यह एक प्रसंग है परन्तु जीवन में ऐसी अनेकों घटनाएँ हैं जो माता-पिता को देखकर बच्चे जीवन अच्छा भी बनाते हैं और बुरे संस्कारों वाला भी। अभिभावकगण बालक पर पूरी दृष्टि रखें। उसकी संगत कैसी है? सुबह से रात्रि तक हमारे चलने-फिरने, उठने-बैठने, खाने-पीने, सोने-जागने, पढ़ने-लिखने, हँसने-बोलने और काम करने का तरीका सब कुछ संस्कार कहलाता है। बच्चों के भीतर पूर्वजन्म के संस्कार भी होते हैं। संस्कार देने का कार्य यही है उनके बुरे संस्कारों को निकालकर अच्छे संस्कारों का भरना है।

बचपन से ही माता-पिता ने अपनी पुत्री विक्टोरिया को उत्तम, गुणी एवं शीलवती बनाने का प्रयत्न किया। एक दिन विक्टोरिया का मन पढ़ने में नहीं लग रहा था। उसकी शिक्षिका ने कहा—थोड़ा पढ़ लो। मैं तुम्हें जल्दी छुट्टी दे दूँगी। बालिका बोली—आज मैं नहीं पढ़ूँगी। शिक्षिका—मेरी बात मान लो। बालिका—मैं नहीं पढ़ूँगी। माता ने यह सुन लिया। वह कमरे में आ गई और पुत्री को डाँटने लगी—क्या कह रही थी। शिक्षिका— आप नाराज न हों राजकुमारी ने एक ही बार मेरी बात नहीं सुनी है। बालिका ने तुरन्त कहा—आपको याद नहीं मैंने दो बार बात नहीं सुनी। बचपन में ही सत्य के प्रति इतनी जागरूकता एवं उदार स्वभाव के कारण ही विक्टोरिया इतनी विख्यात व प्रजाप्रिय हो सकीं।

भावी पीढ़ी और हम

साध्वी जयंतप्रभा

एक प्रसिद्ध चीनी कहावत है—यदि तुम एक साल की योजना बनाना चाहते हो तो उर्वर धरती पर बीजों की बुवाई करो। यदि तुम दस साल की योजना बनाना चाहते हो तो एक पेड़ लगाओ और यदि तुम सौ साल की योजना बनाना चाहते हो तो एक पीढ़ी को संस्कारित करो।

सोचें हमारी पीढ़ी का क्या हाल है? आधुनिकता व भौतिकता के चक्कर में हमारे बच्चों के संस्कार किस तरफ जा रहे हैं? वर्तमान युग में माता-पिता अपने बच्चों के लिए हर प्रकार की सुख-सुविधाएँ जुटाने में लगे हैं। लेकिन बच्चों को कार से पहले संस्कार दें। अगर उनके पास सिर्फ कार होगी तो संभव है कि वे बिगड़ जायेंगे। लेकिन संस्कार होंगे तो वे दुनिया में सरताज बन जायेंगे।

दुनिया में वे माता-पिता सामान्य माता-पिता कहलाते हैं जो बच्चों को सिर्फ जन्म देते हैं। जो बच्चों को जन्म के साथ उन्हें सम्पत्ति भी देते हैं, वे मध्यम दर्जे के माता-पिता कहलाते हैं। लेकिन वे माता-पिता उत्तम कहलाते हैं जो बच्चों को जन्म देने के साथ-साथ संस्कार निर्माण की सम्पदा भी देते हैं। बच्चों को कार मिले या ना मिले, लेकिन संस्कार जरूर मिलने चाहिए।

कहते हैं कि कितने ही जीरो लिख दिये जायें, जब तक आगे एक नहीं लिखा जायेगा सब शून्य ही रहेगा। जब तक माता-पिता भी बच्चों में धार्मिक व नैतिक संस्कार नहीं देंगे तब तक सब शून्य माफिक ही रहेगा। नीतिकार ऐसे माँ-बाप हेतु कहते हैं—

माता शत्रु पिता बैरी, येन बालो न पठितः।
न शोभते सभा मध्ये, हंस मध्ये बको यथा।।

अर्थात् जो माता-पिता अपने बच्चों को संस्कारित नहीं करते हैं, वे उनके शत्रु हैं पालक नहीं।

बच्चों के भविष्य के लिए, उनके जीवन निर्माण के लिए जितना बच्चों को जागरूक रहना जरूरी है उससे कई गुना अधिक माता-पिता को जागरूक रहना आवश्यक है। सुसंस्कारी व गुणवान संतान ही माता-पिता की यश कीर्ति की पताका फहरा सकती है।

वरमेको गुणों पुत्रों न च मूर्खा शतारपि।
एकश्चन्द्रतमोहंति न च तारागणोऽपि।।

अर्थात् सौ मूर्खों में एक गुणी (संस्कारी) पुत्र ही श्रेष्ठ है। एक ही चन्द्रमा अंधकार का नाश कर देता है। जो तारों का विशाल समुदाय भी नहीं कर सकता है।

सही मायने में सुसंस्कारी संतान ही भविष्य में माता-पिता को सुखी कर सकती है। अतः भौतिक शिक्षा से भी अधिक जरूरी है—अध्यात्मिक-नैतिक शिक्षा। अपने बच्चों को इतना अच्छा व बेहतर बनाएँ कि आपका बच्चा समाज की अग्रिम पंक्ति में बैठने लायक बन सके। युग के प्रति सावधान रहना चाहिए। आप कहीं ममता के अंधे धृतराष्ट्र न बन बैठें। कुंती और जीजाबाई जैसी माताएँ बनें ताकि आपकी संतान लव-कुश, श्रवण कुमार जैसी बने।

बच्चों के संस्कार निर्माण में घर के वातावरण का भी बहुत प्रभाव पड़ता है। बच्चों को कई बार बंदर सेना कहा जाता है। कारण कि बच्चों में बंदर की तरह नकल करने की प्रवृत्ति होती है। बड़ों की प्रवृत्तियाँ देखकर बच्चा वैसे ही बनने की कोशिश करता है। अतः बच्चों के सुन्दर या उज्ज्वल भविष्य हेतु परिवार के बड़ों को बहुत सावधान होकर घर में धार्मिक वातावरण तैयार करना चाहिए।

बच्चे के जीवन निर्माण का प्रयत्न बहुत कम होता है। बच्चों का निर्माण करने के लिए माँ को बच्चा बनकर रहना जरूरी है।

बच्चे घर के कुलदीपक होते हैं। वे समाज का सेतु बना करते हैं। बच्चा ही हर देश का भविष्य होता है। इसलिए एक बच्चे का निर्माण अपने आप में एक सम्पूर्ण परिवार, एक सम्पूर्ण समाज, सम्पूर्ण देश का निर्माण करने के समान हुआ करता है।

बच्चों का जीवन अति पावन,
लगता सबको मन भावन,
संस्कारों की सौरभ से ही,
सुरक्षित हो इनका तन-मन।।

बच्चों का संसार

समणी सत्यप्रज्ञा

सामान्य व्यक्ति यह नहीं जानता कि आने वाला कल क्या थामे हुए है, पर यह जानता है कि आने वाले कल को कौन थामे है। आज के सेवाप्राप्त कल नयी यात्रा के लिए तैयारी कर देंगे। आज के कर्णधार शनै:-शनै: सेवाप्राप्ति की ओर अग्रसर हो जाएँगे। आज का बचपन कल का कर्णधार बन जाएगा। आज का टिमटिमाता दीपक कल का सूरज बन जाएगा। स्पष्ट है हमारा आज हमारे कल को थामे हुए है। आज के बच्चों में कल का भविष्य निहित है। अत: बच्चों की दुनिया सपनों की दुनिया होती है। आसक्ति, फलेच्छा और असफलता से अपरिचित होने से उनकी ऊर्जा अवरुद्ध नहीं होती। कभी खत्म न होने वाले शिक्षा के एकांकी पथ पर वे सदा चलते रहते हैं। बच्चे कभी आलसी नहीं होते। वे चाहे किसी के भी हों, मुस्कुराते हैं तो अच्छे लगते

हैं, खिलखिलाते हैं तो फूल झड़ते हैं। तुतलाते हैं तो यूँ लगता है मानो झरने गुनगुनाते हों, रोते हैं तो अंदर कुछ चटकता सा है।

बच्चे भारत की कुल आबादी का पाँचवाँ हिस्सा हैं। देखना यह है कि उनकी आँखों में कितना उजाला है कितना अँधेरा है। जिज्ञासा के पंखों को फड़फड़ा कर वे जिन्दगी के आकाश में उतरना चाहते हैं। गाँधी जी का मानना था कि पहले पाँच वर्षों में बच्चों को जो मिलता है वह फिर कभी नहीं मिलता। इस अवस्था में बच्चों के पास ढेरों जिज्ञासाएँ होती हैं, कहीं न थमने वाले प्रश्नों की शृंखला। यहाँ जवाबदारी उनके अभिभावकों पर हो जाती है कि कितना उनकी जिज्ञासाओं को पोषण मिल पाता है, कितना सघन प्रेरणा या प्रोत्साहन मिल पाता है या कितनी कलियों को खिलने से पहले ही रौंद दिया जाता है। डाँट-फटकार, अपमान-तिरस्कार के साथ हीन ग्रंथ की जड़ें जमा दी जाती हैं। बच्चों का जिज्ञासु मस्तिष्क प्रश्न पर प्रश्न करना जानता है, उत्तर की प्रतीक्षा करना या उत्तर सुनने की फुर्सत भले उनके स्वभाव में हो या न हो।

कई बार अभिभावक बच्चों के जिज्ञासु मस्तिष्क को सही ढंग से समझ नहीं पाते तो उनके सवालों का खतरनाक पहलू समझ उनका जवाब देने के लिए इस हताश ढंग से निरुतर हो जाते हैं कि उन्हें कोसने या पीटने लगते हैं। जबकि हम जानते हैं किसी को पीटना-कोसना किसी सवाल का जवाब नहीं। बच्चे तो हमेशा नए-नए सवाल पूछते आए हैं। उनके सवालों में नयी कल्पना होती है, नयी खोज होती है, नयी धरती होती है नया आकाश होता है, नया समाज और नया संसार होता है।

नीतिकार कहते हैं—'बालादपि सुभाषितम्।' बच्चों से भी सुभाषित ग्रहण कर लेना चाहिए। ना जाने किस रूप में नारायण मिल जायें।

बच्चों का संसार 'हम सब एक हैं' का संसार है। नाम, रूप, जाति, धर्म के भेद से मुक्त उनकी हँसी सबको आनन्दित करने वाली है। उनका यह एकत्व देशकाल की किसी भी सीमा के बंधन को अस्वीकारते हुए यदि कायम रहता है तो शान्ति और अमन-चैन से भर नए युग के निर्माण में देर ही कितनी लगेगी।

कहा जाता है 'अ चाइल्ड इज फादर ऑफ द नेशन', किसी भी राष्ट्र की सुरक्षा, सार-सँभाल और खूबसूरती उस राष्ट्र के बच्चों के सपनों व संकल्पों में बसती है। आज देश को खतरा बाहरी ताकतों से उतना नहीं जितना अपने ही भीतर छिपे स्याहपोश गद्दारों से है। निष्ठा और ईमानदारी के साथ जोश और होश को सँभाले पैनी निगाहों के हाथ में जब भी कमान होगी, स्याह ताकतों को घुटने टेकने होंगे। जब बच्चों की पैनी निगाहें पूछती हैं—मछलियाँ चश्मा क्यों नहीं पहन लेतीं ताकि मछेरों को देख पाएँ और उनके जाल से भाग जाएँ। तो अन्दाजा लगाया जा सकता है कि उनका कल्पनालोक आगे जाकर किस वास्तविक लोक को आकार देगा।

प्रतिस्पर्धा, प्रतिद्वन्द्विता और प्रतिक्रिया की दुनिया में फँस कर शिखर छू लेना आसान नहीं है और यदि छू भी लिया तो वह विजय किसी पराजय से कम नहीं है क्योंकि भय-आशंका व भीतरी अशान्ति अगले क्षण ही पासा पलटने को तैयार रहती है। आचार्य श्री महाप्रज्ञ के अनुसार साधारण बन जाना—जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है। सामान्यत: व्यक्ति अपनी अच्छाई सुनना पसंद करता है और अवसर मिले तो दूसरों की आलोचना करता है। लेकिन शांति भरी सफलता की राह पर चलने वालों की सोच इससे ठीक विपरीत होती है। प्रबंधन की भाषा में—अपनी कमी जानना विकास का पहला द्वार है। अच्छा प्रबंधक कमी बताने वाले के लिए पुरस्कार भी तैयार रखता है। सिम्पल लिविंग एण्ड हाई थिंकिंग के साथ बच्चों की दुनिया यदि आगे बढ़ती है, कौनसी ताकत है जो उन्हें रोक सके। स्वेच्छा से अपनाया गया आकिंचन्य सादगी है। इस सादगी के साथ लोक-मंगल की डोर थामे जब नन्हें कदम आगे बढ़ेंगे, किसी भी समाज की छवि सुधरने में समय न लगेगा।

कैसे बनें सफल अभिभावक

विनीता सुराणा

बच्चे देश का भविष्य, विश्व का गौरव और परिवार की शान होते हैं। बच्चे का जीवन कोमल पौधे की तरह होता है, उसे जिस ओर मोड़ना चाहें, मोड़ सकते हैं। अभिभावकों का दायित्व है वे बच्चों के अंदर सामर्थ्य का सिंचन व पोषण से अच्छे संस्कारों का सिंचन करें ताकि भावी पीढ़ी विशाल वटवृक्ष के समान विकसित होकर भारतीय संस्कृति के गौरव की रक्षा करने व कुल की शान बढ़ाने में समर्थ हो सके। बाल्यकाल के संस्कार व चरित्र निर्माण पर ही मानव के भावी जीवन का आधार तैयार होता है। विश्व की सबसे छोटी किंतु सबसे महत्वपूर्ण इकाई वर्तमान में बच्चों का मस्तिष्क कम्प्यूटराइज्ड बनता जा रहा है। इसलिए अभिभावक अपनी पूरी सतर्कता बनाएँ रखें और बच्चों को संस्कारी बनाएँ।

अभिभावक स्वयं आदर्श बनें : बच्चे अनुकरणप्रिय होते हैं, जैसे घर के सदस्यों का आचरण देखते हैं वैसा वे अनुकरण करते हैं। हम अपने घरेलू वातावरण को क्लेशमुक्त, व्यसनमुक्त स्वस्थ व प्रसन्न रखें। घर के बड़े-बूढ़े माता-पिता, सास-ससुर के प्रति हमारा आदरपूर्ण व्यवहार हो। दादा-दादी बच्चों का सबसे अच्छा पालन-पोषण कर सकते हैं। उनके अनुभव की तुलना कोई नहीं कर सकता। अत: अभिभावक अपने बच्चों के संतुलित विकास के लिए बेहतर आदर्श प्रस्तुत करें।

बच्चों की संगत अच्छी हो : जन्म से कोई बच्चा बुरा या व्यसनी नहीं होता। पर संगत से वह अच्छा या बुरा बन जाता है। एक गलत संगत हमारे घर रूपी उपवन को जंगल व उजाड़ बना सकती है। अभिभावक यह ध्यान दें कि उनके बच्चे के दोस्त कैसे हैं, क्या करते हैं, कितना समय कहाँ बिताते हैं। बच्चा यदि गलत संगत में रह रहा है तो उसे सावधान करें। प्यार से समझाएँ, मार-पीट ना करें। गलत संगत से बच्चे के भीतर चोरी, झूठ बोलने की आदत या गलत प्रवृत्ति आ जाएँ तो उसे प्यार, स्नेह के साथ सुधारने की कोशिश होनी चाहिए।

बच्चों के साथ मित्रवत व्यवहार करें : बच्चे को हँसमुख बनाने के लिए आप स्वयं उनके दोस्त बनकर बच्चों के साथ हँसी-मजाक करें। अगर हम अपने बच्चों को पूरा समय देते हैं, उनकी बातों को ध्यान से सुनते हैं, उन्हें जीवन निर्माण संबंधी बातें बताते हैं तो बच्चे कभी गलत रास्ते का चुनाव नहीं करेंगे। बच्चों का पुरस्कार के प्रति सहज आकर्षण होता है। इसलिए बच्चे जब भी रचनात्मक कार्य करें या परीक्षा में अच्छे अंक लाएँ, अपना कार्य अपने करते हों या फिर घर के छोटे-मोटे कार्यों में विशेष सहयोग देते हों तो उन्हें अवश्य पुरस्कृत करना चाहिए।

प्रतिभा को सही दिशा दें : बच्चे हमारा भविष्य हैं। उनकी हँसी घर को खुशियों से भर देती है। बच्चे के कार्यों की तुलना दूसरे बच्चों से करके या उनका दोष गिनाकर या उसकी गलती के लिए दूसरों के सामने डाँटकर उसकी कार्यक्षमता को घटाना उचित नहीं है। इससे बच्चे या तो दब्बू बन जाते हैं या फिर चिड़चिड़े व जिद्दी। यदि बच्चा पढ़ाई या काम में दूसरे बच्चों से पीछे है तो लज्जित करने के बजाए उसके अन्य गुणों को उभारने की कोशिश करें। यह तो स्पष्ट है हर बच्चा कक्षा में प्रथम नहीं आ सकता। माता-पिता बच्चों में पॉजेटिव विचार भरें ताकि बच्चों की प्रतिभा में निखार आ सके।

टी.वी. पर ब्रेक लगाएँ : आज चिंतन का विषय यह है कि टी.वी. के प्रति आकर्षण कम कैसे हो? मूल गलती हमारी ही है बचपन में जब भी बच्चा रोता है, खाना नहीं खाता तो हम टी.वी. ऑन करके उसे बिठा देते हैं सुला देते हैं। बचपन के संस्कारों को मिटाना आसान नहीं है। बच्चों को टी.वी. देखते समय खाने की आज्ञा न दें। एक समय में एक काम करने की आदत डालें। ऐसा अनुशासन स्वयं अभिभावक अपने पर भी लगाएँ ताकि बच्चों पर हमारी बात का असर पड़ने लग जाए। टी.वी. देखने के लिए एक-दो घंटा समय निर्धारित करें जिसमें वे ज्ञानवर्धक सीरियल कार्टून देख सकें। टी.वी. देखते समय ऐसी व्यवस्था करें कि वे स्वयं रचनात्मक कार्य करें। जैसे कार्टून का चित्र बनाना। उसे यह प्रेरणा दें कि टी.वी. में जो कुछ देखें शाम को सोने से पहले परिवार के सदस्यों को बताएँ और आप अच्छी बातें बताओगे तो आपको इनाम भी मिलेगा। इस प्रेरणा

से बच्चों की वकृत्व शैली का विकास होगा फिर बच्चे टी.वी. में अच्छे सीरियल देखेंगे, ध्यान से सुनेंगे और याद भी रखेंगे क्योंकि शाम को उसे सबको बताना है कि उसने आज क्या देखा। बच्चों के जीवन निर्माण में हम अभिभावक कुम्हार की तरह अनुशासन, प्यार और वात्सल्य का प्रयोग करें, साथ ही अपनी मन की इच्छाओं को सीमित कर बच्चों को समय दें जिसमें टी.वी. की उपयोगिता एवं हानि बताएँ। उसकी जिज्ञासाओं का समाधान करें तो बच्चा हमारी बात अवश्य सुनेगा। हमारा समझाने का तरीका इतना सरस और सरल हो जिसमें वात्सल्य झलके। नि:संदेह बच्चों में यह समझ विकसित होती जाएगी कि हमें अच्छे बच्चे बनने के लिए टी.वी. से सम्पर्क कम रखना है।

बच्चों को नियमित ज्ञानशाला भेजें : ज्ञानशाला से बच्चों की जीवनशैली में निश्चित ही बदलाव आता है। ज्ञानशाला में बच्चों को जीवन की वह खुराक रूपी शिक्षा मिलती है जो उन्हें अच्छा बच्चा ही नहीं एक अच्छा इंसान भी बनाती है। ज्ञानशाला की प्रशिक्षिकाएँ कहानी तथा महापुरुषों के संस्मरणों से बच्चों के जीवन में सद्संस्कार भरने की कोशिश करती हैं। गुस्सा कम करने और सोच को पोजेटिव बनाने के लिए प्रेक्षाध्यान, जीवन विज्ञान के माध्यम से अनेक प्रयोग कराए जाते हैं। जिसका काफी अच्छा परिणाम सामने आ रहा है। कई बच्चों ने अनुभव किया कि ज्ञानशाला में आने के बाद उन्होंने जीवन निर्माण की कला सीखी है। उनका टी.वी. के प्रति आकर्षण भी कम हुआ है। अगर बच्चों को कुछ बनाना चाहते हो तो अभिभावक जागरूक बनकर बच्चे को अवश्य ज्ञानशाला भेजें। बच्चे स्वयं ज्ञानशाला आएँ और अपने साथियों को भी ज्ञानशाला आने के लिए प्रोत्साहित करें।

अच्छे साहित्य पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करें : बच्चों में छोटी उम्र से ही पढ़ने की आदत डालें। माता-पिता शुरू से ही कुछ न कुछ पढ़कर सुनाएँ। सुनकर भी बच्चे कितना कुछ ग्रहण कर लेते हैं। बच्चों को अच्छी रोचक चित्रों वाली किताबें लाकर दें। फिर उन्होंने किताबों से क्या सीखा इस बारे में बच्चों से बात करें।

जिम्मेदार इंसान बनाएँ : अभिभावक बच्चों को सिखाएँ कि वे उन्हें सौंपे गये किसी भी काम को करते समय शर्म महसूस ना करें। बच्चों को छोटे-मोटे कार्य सौंपते रहें जैसे उन्हें अपने खिलौने-किताबें ठीक जगह पर रखने, अपने कपड़े, मौजे अपने आप पहनने, बड़ों को खाना खिलाने, पानी झलाने जैसे कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करें। बच्चों को प्रयोगधर्मी बनाएँ। अपने फैसले अपने लेने के लिए प्रोत्साहित करें जिससे वे मानसिक रूप से परिपक्व बनेंगे और बड़े होकर होशियारी भरे बेहतर फेसले ले सकेंगे। जन्म से लेकर आठ साल तक यदि माँ-बाप अपनी इच्छाओं को सीमित कर सिर्फ बच्चों के निर्माण में समय लगाएँ तो हमारे बच्चे हमें वो सब चीजें देंगे, हमारी सारी उम्मीदों को पूरा करेंगे जिसकी हमने और आपने आशा लगाए रखी है।

बच्चे हमारे देश की संपत्ति हैं,
बचपन की अपनी अलग मस्ती है।
रखनी है सावधानी इनके परवरिश में
क्योंकि बच्चे हमारे देश,
समाज व परिवार की भावी हस्ती हैं।।

स्वप्न करें साकार

विनीता सुराणा

ज्ञानशाला करती है आह्वान भावी पीढ़ी का करें निर्माण
कर जीवनमूल्यों की पहचान, करें नई ऊर्जा का निर्माण,
बढ़ते जाएँ चढ़ते जाएँ, आगे कदम बढ़ाएँ।।

जागृति के नवदीप जलाएँ, व्यक्तित्व विकास का लें संबल,
संस्कार ज्ञान करता स्वयं का सृजन, खिलता बच्चों का जीवन
हर परिस्थिति में हर पल, फूल बन मुस्काएँ।।

आसन, ज्ञान, ध्यान स्वाध्याय करते जीवन का निर्माण
सुसंस्कारों का सिंचन दे, करते जीवन का कल्याण,
'संयम ही जीवन' आचरणों में इसका आधार पाएँ।।

नई हवा के नये फूल, हम नयी सुगंध फैलाएँ,
तोड़ रूढ़ियाँ निर्भयता से, आगे कदम बढ़ाएँ,
तज पाश्चात्य शैली, स्वस्थ हम बन जाएँ।।

ज्ञानशाला है सद्गुण मोती, कदम कदम उपकारी,
बच्चों को करती संस्कारी, जीवन मूल्यों की रखवारी,
है धृतिधारी, बाल पीढ़ी गौरव गाएँ।।

युगदृष्टा का व्यापक चिंतन, ज्ञानशाला यह सार्थक होगी,
रहें खोजती सद्गुण मुक्ता, बदले युग की जीवनधारा,
कर खुद की खुद पहचान, अंतरंग का पौरुष जागे।।

है अमूल्य ज्ञानशाला, गुरु तुलसी महाप्रज्ञ की शोध है,
गुरु महाश्रमण की अनुपम प्रज्ञा में सुसंस्कारों का मिलता बोध है,
जो अपनाएँ इसको, मिटते सब पथ के अवरोध हैं।।

बच्चो बन सको तो मिसाल बनो, मशाल बनो,
गुरुवर के सपने को साकार करो, मन में अनुपम शौर्य जगाओ,
सामंजस्य परस्पर, साधार्मिक वात्सल्य एकता लाओ।।

ज्ञान का दीपक

सुमन भण्डारी

तारों के बिना कभी विद्युत का संचार नहीं होता,
रेखाओं के बिना कभी चित्र तैयार नहीं होता।
स्वस्थ व्यक्ति और समाज का निर्माण करने वालो,
संस्कारों के बिना यह स्वप्न साकार नहीं होता।।

यह संसार एक वाटिका है। इस संसार-वाटिका के रंग-बिरंगे मन-मोहक सुन्दर फूल हैं— ''बालक। वह परिवार की रीढ़ व समाज व राष्ट्र का उज्ज्वल भविष्य है। उसे स्वस्थ रखना और सँवारना सबसे जरूरी है।

हम श्रद्धाप्रणत हैं आलोकधर्मी युगद्रष्टा आचार्यश्री तुलसी के जिन्होंने पहले ही इस आवश्यकता को भाँप लिया और उन्होंने यह फरमाया—''कोरी बौद्धिकता इस युग को त्राण नहीं दे पायेगी।''

वास्तव में सद्-संस्कार एवं आध्यात्मिकता के आलोक से ही जीवन में सच्चे आनंद की अनुभूति हो सकती है। सद्संस्कारों व संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्धन का एक सशक्त उपक्रम है—''ज्ञानशाला''।

वर्तमान युग शिक्षा का युग है। शिक्षा एक ऐसा अमूल्य रत्न है जो सबको ज्ञान व विवेक प्रदान करता है। शिक्षा जीवन-सागर का ऐसा आलोक-स्तम्भ है जो उसमें तैरते हुए प्राणियों का दर्शन करती है और उन्हें भूलने-भटकने से रोकती है। यह शिक्षा और सार्थक तब बन जाती है जब इसमें संस्कार जुड़ जायें। उदाहरण के लिए मिट्टी के घड़े में गंध है पर जल के सम्पर्क में आने से वह समाहित हो जाती है और सौंधेपन में परिवर्तित हो जाती है। संस्कारों की शिक्षा हमें भूलने-भटकने से रोकती है। शिक्षा के साथ सत्संस्कार ठीक वैसे ही प्रकट होते हैं जैसे बल्ब में प्रकाश। सत्संस्कारों के सम्यक् शिक्षण-प्रशिक्षण से बच्चों में नैतिक गुण एवं सकारात्मक क्षमता प्रकट होती है।

ज्ञानशाला एक ऐसा मंदिर है जहाँ प्रत्येक बालक-बालिका को ज्ञान रूपी दीपक जलाने का अवसर मिलता है। ज्ञानशाला वह माध्यम है जिसमें बालकों के जीवन की दिशा एवं दशा दोनों बदलती हैं, उन्हें भविष्य के लिए सही पथ मिलता है और वे एक नैतिक एवं सफल इंसान बनते हैं।

ज्ञानशाला गुरुदेव तुलसी का एक अमूल्य अवदान एवं अनमोल वरदान है जिसके कलेवर में आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने नैतिकता एवं जीवन-मूल्यों का कमनीय चित्र उकेरा है और वर्तमान आचार्यश्री महाश्रमणजी की दूरदृष्टि एवं प्रेरणा इसमें नित्य नये रंग भर रही है।

आज के युग में आधुनिकता की चकाचौंध व भागदौड़ वाली जिन्दगी में, जहाँ बच्चे भारी-भरकम बस्ते के भार से दब गये हैं, ऐसे में बच्चों को संस्कारित करना और उन्हें शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ बनाना अत्यन्त जरूरी है। यह ज्ञानशालाओं के द्वारा पूरे भारतवर्ष में संभव हो रहा है। समाज का हर बच्चा इससे जुड़े, कोई भी इस अवदान से अछूता न रहे, हमारा ऐसा प्रयास होना चाहिए।

हम ज्ञानशाला आध्यात्मिक पर्यवेक्षक मुनि उदित कुमारजी के आभारी जो अपने अथक परिश्रम से ज्ञानशालाओं को नित नई ऊँचाइयाँ प्रदान करने में जुटे हुए हैं। साथ ही, वे नये आयामों को जोड़ने की तैयारी में भी हैं। रजत जयंती वर्ष में ज्ञानशाला में कई नये आयाम जुड़ेंगे, ऐसा पूर्ण विश्वास है।

आज हम अपने बच्चों को हर क्षेत्र में आगे बढ़ाने के लिए तैयार हैं। फिर संस्कारों के क्षेत्र में हम क्यों पीछे हैं? बच्चों के जीवन में संस्कारों का मूल्य है, अहमियत है, उपयोगिता है, अत: हमें बच्चों को संस्कारों के क्षेत्र में भी विकसित करने की पूर्ण मानसिकता बनानी चाहिए।

आचार्य तुलसी ने कहा—''जब जागे, तभी सवेरा।'' अभिभावकों को जागरूक होने की आवश्यकता है, एक दिन शुभ भविष्य अवश्य ही उनके सामने होगा।

''संस्कारी हों सारे बच्चे, विद्या बुद्धि शिष्ट।
घर-घर जागे सुसंस्कार, यही हमारा इष्ट।।
ज्ञानशाला देती है, सबको यह पैगाम।
तुलसी दीपक ज्ञान का, जगमग आठों याम।।

संयमित रहें

अमरवती सक्सेना

परिवार एक गुलदस्ते या उपवन के समान है जिसे माली ने कठोर परिश्रम से सजाया है। इसमें फूल, पत्तियाँ, काँटे, फल सभी हैं। फूलों ने अपनी सुगंध से पूरे घर को सुवासित किया पर काँटों की चुभन ने असावधानीवश माली के तन-मन को लहूलुहान कर दिया। आप समझ ही रहे होंगे। माली परिवार का मुखिया है व फूल पत्तियाँ, फल, काँटे अन्य सदस्य हैं।

समय के साथ हर चीज की अवस्थायें बदलती हैं। प्रकृति परिवेश, भौतिक साधन, यहाँ तक हमारा शरीर भी क्रमश: बाल, युवा, प्रौढ़ा और अन्त में वृद्धावस्था से गुजरता है। इसमें हम सभी अपनी जिन्दगी जीते हैं जिन्दगी को करीब से देखते हैं। सुख-दु:ख के झूले में झूलते हुए, काल के थपेड़े झेलते हुए वट वृक्ष की भाँति सबको अपनी शीतल छाया से आनंदित करते रहते हैं परन्तु वृद्धावस्था में अपने को अन्दर से खोखला सा महसूस करते हैं। ऐसा क्यों है।

कोई भी बीज बन्द कमरे व छाया में नहीं पनपता। उसको खुला वातावरण चाहिये। उसी प्रकार आज की युवा पीढ़ी स्वतन्त्र, स्वच्छंद जीवन जीकर अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए आकाश को छूने का प्रयास कर रही है। पर खेद है इस भागमभाग में उसे अपने बुजुर्गों की ओर ध्यान देने का समय नहीं है। स्वतन्त्रता का स्थान उच्छृंखला ने ले लिया है। मर्यादाहीन तथा असंयमित जीवन जीकर युवा बुजुर्गों से विमुख होते जा रहे हैं ऐसा क्यों हो रहा है। इसके कई कारण हैं।

आज के इस इलेक्ट्रॉनिक युग में भौतिक सुख साधनों को पाने की होड़ सी लगी है। इच्छा हुई उसकी तुरंत पूर्ति हो जाये। यहीं से विवाद शुरू होता है। कर्ज या फिर पैतृक धन पर नजर होती है। थोड़ा मिल जाने पर अपेक्षाओं को बल मिल जाता है। स्वार्थ पनपने लगता है, उसे अब स्वयं का परिवार दिखाई देता है। माता-पिता जब तक तन, मन, धन से साथ दें तब तक उनकी पूछ होती है नहीं तो रस निकले नींबू के छिलके की भांति फेंक दिया जाता है। उनकी हर बात बुरी लगती है। आचार, व्यवहार, मर्यादाहीनता से आये दिन टकराव की स्थिति आती है। बुजुर्ग अपना किया गिनाते हैं युवा उल्टे आक्षेप लगाते हैं। आपने जो कुछ किया वह आपका फर्ज था। यह तो सही है पर कोई उनसे पूछे अब तुम्हारे भी तो कोई फर्ज होंगे। युवा वर्ग अकेलेपन का दर्द क्या होता है नहीं जानता। अपना पूरा समृद्ध और खुशहाल परिवार देखने की चाह में जिस शरीर ने खुद को समय के साथ लड़ते-लड़ते तपाया उन्हें वृद्धाश्रम में छोड़ दिया जाता है। हमारे पूर्वजों का कहना है कि वृक्ष की छाया वृक्ष से ही बँधी होती है वह चाह कर भी कहीं नहीं जा सकती है। अत: ध्यान रहे माता-पिता के आशीर्वाद में असीम शक्ति होती है जिसके प्राप्त होने से संतान का चहुँमुखी विकास संभव होता है। जो युवा अपने बुजुर्गों को अपने सेवाभाव से, अपने आज्ञा पालन से, अपने सद्गुणों व व्यवहार से अति प्रसन्न करता है, उन्हें सन्तुष्ट करता है, उनका घर घर न रहकर स्वर्ग बन जाता है।

अत: भूलकर भी बुजुर्गों का साथ ना छोड़ें। उनके लिए अपशब्दों का प्रयोग न करें। उनके दिल की बात अवश्य सुनें। उनकी जरूरतों को पूरी करें। बुजुर्गों को शारीरिक व मानसिक दोनों तरह की सहायता की जरूरत होती है, उन्हें आपके पैसे से ज्यादा प्यार की जरूरत होती है। आपके सहारे की जरूरत होती है। संसार का प्रत्येक बुजुर्ग व्यक्ति आदर का पात्र है क्योंकि वृद्धावस्था मनुष्य जीवन का अन्तिम स्टेशन है। अन्त में, हमारी भारतीय सभ्यता व संस्कृति में हमें सिखाया है जड़ों से दूर रहकर कभी पेड़ पनप नहीं सकते हैं।

आज की बात

कार्टून करैक्टर्स और आज के बच्चे

नवीन बाँठिया

आधुनिकता और वैज्ञानिक युग ने आज मनुष्य को बुरी तरह प्रभावित कर लिया है। आज विज्ञान का हर एक नया आविष्कार इंसान के व्यक्तिगत जीवन में प्रवेश कर गया है। व्यक्ति न चाहते हुए भी इन नित नए गैजेट्स का गुलाम बनता जा रहा है। यह सही भी है कि वैज्ञानिक युग में इनकी उपयोगिता जरूरी बनती जा रही है। लेकिन विडम्बना यह भी है कि इंसान अपने मूल रूप को खोता जा रहा है। मशीनी युग में मशीन बनता जा रहा है। जहाँ किसी भी तरह के संस्कार को कहीं जगह नहीं मिल रही है। इसका सर्वाधिक प्रभाव आज की पीढ़ी पर स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा है। परोक्ष रूप में आज अभिभावक बहुत खुश दिखाई देते हैं कि उनका बच्चा बहुत होशियार है परन्तु अभिभावकों को चाहिए कि बच्चों को उनके साथ की तथा उनसे मिले प्यार की भी बहुत आवश्यकता है। आज के अभिभावक भी प्रतियोगिता से भरे जीवन में अर्थोपार्जन के लिए लगे रहते हैं ताकि बच्चों को उच्च शिक्षा व बेहतर जीवन शैली दे सकें। जीवन की इस आपाधापी में संस्कारों का बीजारोपण व उचित मार्गदर्शन के अभाव में बच्चे अपनी दिनचर्या में आधुनिक गैजेट्स को अपना साथी मान लेते हैं।

इन दिनों बच्चों का पसंदीदा टी.वी. चैनल है कार्टून चैनल्स। इन कार्टून चैनल्स के करैक्टर का इतना प्रभाव बच्चों पर पड़ता है कि यह एक नशे का रूप धारण कर चुका है। जिससे बच्चों की शारीरिक व मानसिक सेहत पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। न्यूक्लियर फैमिली तथा सिंगल चाइल्ड कॉनसेप्ट का बढ़ता चलन इस बाल पीढ़ी को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों रूप में प्रभावित कर रहा है। वर्किंग पैरेंट्स, कोचिंग क्लासेस तथा सिकुड़ते खेल के मैदान भी अप्रत्यक्ष रूप से बच्चों को प्रभावित कर रहे हैं।

पैरेंट्स भी हैं कन्फ्यूज : आज के अभिभावक भी सही निर्णय नहीं ले पा रहे हैं। कारण है कि उनके पास समय की कमी है। नौकरीपेशा लोग एक निश्चित समय-सारणी में बँधे होते हैं। बच्चों के साथ बैठना, उनकी बातें समझना आदि पैरेंट्स की प्राथमिकता में नहीं रहती। कारणवश बच्चा कार्टून चैनल्स आदि देखने में व्यस्त हो जाता है। उन्हें कार्टून्स की वर्चुअल दुनिया ही वास्तविक लगने लगती है। बच्चे जीवन की वास्तविकता उन्हें ही समझने लगते हैं। बच्चे अपनी हर जिज्ञासा का समाधान इन्हीं कार्टून्स करैक्टर्स में ढूँढ़ने लगते हैं। बच्चे अपनी आदतों में इन कैरेक्टर्स की नकल करने लगते हैं जो कि वास्तविकता से बहुत परे होती है। कुछ समय पहले तक बच्चे अपने फेवरेट कैरेक्टर्स के लंच बॉक्स, वाटर बॉटल, ज्यामेट्री बॉक्स आदि की जिद करते थे। लेकिन समय के साथ उनका खाना-पीना व होमवर्क करना भी कार्टून्स चैनल्स को देखते रहने के साथ हो गया है।

दुष्प्रभाव : आज के अभिभावक बच्चों की परवरिश करते हुए परेशान भी हैं। लगातार टीवी को देखते रहने से बच्चों के शारीरिक व मानसिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। कम उम्र में ही मोटापा, कब्ज, आँखों का कमजोर होना आदि आज के बच्चों में सामान्य रूप से देखा जा सकता है। लगातार इस तरह के प्रोग्राम देखने से बच्चों का पढ़ाई या दूसरे खेलकूद में मन नहीं लगता। सम्मोहित होकर बच्चे इन चैनल्स की भाषा बोलने लगते हैं।

बच्चों का उग्र होता स्वभाव : कई एक्सपर्ट्स की राय में इस छोटी उम्र में बच्चों का उग्र होना उनकी मानसिक व शारीरिक

अवस्था के लिए अनुकूल नहीं है। नौकरीपेशा वाले अभिभावकों के साथ यह एक बड़ी समस्या बनती जा रही है। बच्चों का चिड़चिड़ापन उनका स्वभाव बनता जा रहा है। बच्चे कार्टून्स कैरेक्टर्स की तरह असामान्य व्यवहार करते हुए पाए जाते हैं। आज 7 से 13 वर्ष के बच्चे इस समस्या से पूरी तरह ग्रसित हुए जा रहे हैं। घर और स्कूल में उग्रता बच्चों के सामान्य विकास में बाधक बनती जा रही है। सिनचैन, डोरेमोन, मिकी माउस आदि आजकल फेमस कैरेक्टर्स हैं। बच्चे उनसे बहुत अधिक प्रभावित रहते हैं। अपने वास्तविक जीवन में भी इनको फॉलो करने की कोशिश करते हैं।

विज्ञापनों से भी होता है दुष्प्रभाव : टीवी चैनल्स पर आज बच्चों के जीवन से खान-पान आदि से प्रभावित होने वाली वस्तुओं को विज्ञापन के रूप में इस तरह दिखाया जाता है कि मात्र उन्हीं के सेवन मात्र से ही बच्चों का शारीरिक व मानसिक विकास संभव है, अन्यथा नहीं। ऐसे लुभावने व मनोवैज्ञानिक विज्ञापनों का अपना एक बहुत बड़ा बाजार बनता जा रहा है। कम्पनियाँ मात्र इससे अपना व्यापारिक फायदा ही देखती हैं उन्हें अभिभावकों या बच्चों के स्वास्थ्य से कोई लेना-देना नहीं है। आजकल कई बच्चों के उत्पादों के साथ किसी फेमस कार्टून चैनल्स के कैरेक्टर्स के मॉडल 'फ्री' में दिए जा रहे हैं। बच्चों की जिद कम्पनियों के फायदे के ग्राफ को प्रभावित करते हैं। विज्ञापन की भ्रामकता व बच्चों की फरमाइश के आगे अभिभावक नि:शब्द हो जाते हैं।

अभिभावक रहें जागरूक : नि:सन्देह आज की आपाधापी के युग में बच्चों की परवरिश दिनोंदिन मुश्किल होती जा रही है। लेकिन अभिभावकों को चाहिए कि वे अपने व्यस्त समय का प्रबन्धन ऐसा करें कि उनके बच्चे संस्कारवान बनें। पढ़ाई-खेलकूद के साथ-साथ अच्छे व्यवहारिक बनें। आने वाली जीवन की ऊँच-नीच की परिस्थितियों को अच्छे से सँभालें। बच्चों के साथ बैठकर उनकी जिज्ञासा का समाधान करें, उनके बालमन में विचारों को समुचित स्थान दें। अगर आप बच्चों को ध्यान से सुनेंगे तो परिणाम भी अनुकूल होंगे, बच्चों का आपके प्रति लगाव बढ़ेगा। वे अपने आपको सुरक्षित महसूस करेंगे।

ऐसे करें बच्चों पर कंट्रोल

- टीवी देखने का समय निश्चित करें। अगर एक घंटे का समय निश्चित कर रहें तो उस एक घंटे को भी अलग-अलग प्रोग्राम्स में बाँट दें।
- समयानुसार धीरे-धीरे टी.वी. देखने का क्रम कम करें।
- बच्चों के साथ समय बिताएँ। बच्चों को प्रेरणादायी कहानियाँ, घटनाएँ आदि की जानकारी दें।
- बच्चों को सामान्य जीवन में होने वाली घटनाओं से जागरूक रखें।
- बच्चों की रुचि के अनुसार कोई एक हॉबी डवलप करें।
- समयानुसार कभी-कभी घर से बाहर घूमने के स्थानों पर जू, संग्रहालय आदि पर बच्चों को ले जाएँ।
- अगर घर के आसपास कोई खेल का मैदान या कोई पार्क हो तो आप बच्चों को वहाँ लेकर जाएँ। खेलकूद से शारीरिक व मानसिक विकास में उत्तरोत्तर वृद्धि होती है।
- अपने आध्यात्मिक गुरुजनों के सान्निध्य में बच्चों को लेकर जाएँ ताकि उनका आध्यात्मिक विकास भी संभव हो सके।

कथा बोध

साहस व सच अनमोल

साहस और शौर्य के साथ ही गुणग्राहकता और क्षमाशीलता शायद ही किसी शासक में देखी गई हों, परन्तु शिवाजी में ये गुण प्रचुर मात्रा में थे। वे चरित्रनिष्ठ और गुणवान शत्रु का भी आदर करते थे। एकबार मालोजी नाम का एक बालक हाथ में कटार लेकर शिवाजी की हत्या करने के लिए उनके शयनकक्ष तक पहुँच गया, लेकिन सेनापति तानाजी ने उसे पकड़ लिया।

शिवाजी की नींद खुल गई और उन्होंने बालक से कई प्रश्न किए। बालक ने निर्भीक होकर सभी प्रश्नों के उत्तर दे दिए। उसमें जरा भी भय या घबराहट नहीं थी। बालक ने बताया कि उसकी माता बीमार थी और घर में अन्न का एक दाना भी नहीं था। उसके पिता शिवाजी की सेना में थे और सेवाकाल में ही उनकी मृत्यु हो गई थी। उसी माता और बालक के भरण-पोषण के लिए राज्य की ओर से कुछ भी नहीं किया गया था। हत्या के उद्देश्य के बारे में पूछने पर उसने बताया कि शिवाजी के शत्रु सुभान राय ने बहुत सारा धन देने का लालच देकर उसे हत्या करने के लिए उकसाया था। उसकी निर्भीकता और स्पष्टवादिता से प्रभावित शिवाजी को चिंतन में डूबा देख तानाजी ने कहा—''दुष्ट बालक, अब तू मरने के लिए तैयार हो जा।''

बालक ने निर्भीकता से कहा, ''मैं क्षत्रिय हूँ। मरने से नहीं डरता! परन्तु एक बार मैं अपनी माँ के दर्शन करना चाहता हूँ। सुबह होते ही मैं वापस आ जाऊँगा।'' ''और अगर तुम भाग गए तो?'' शिवाजी ने पूछा। ''कदापि नहीं! प्राण देकर ही मैं अपने वचन को पूरा करूँगा।'' यह सुनकर शिवाजी ने उसे अपनी माता से मिलने की अनुमति दे दी।

दूसरे दिन राजदरबार खुलते ही बालक मालोजी हाजिर हो गया और बोला, ''अब आप मुझे मृत्युदंड दे सकते हैं।'' बालक की सच्चाई और निर्भीकता से शिवाजी मुग्ध हो गए। उन्होंने उसे क्षमा कर दिया और उसे अपनी सेवा में लेकर उसके परिवार के भरण-पोषण की समुचित व्यवस्था भी कर दी।

झूठा घड़ता ही रहे, हरदम ओघड़ घाट।
सांचा रे चिन्ता नहीं, बण्या रहे सम्राट।।

साभार—ज्ञान रश्मियाँ

अब तो जागें

फास्टफूड है हानिकारक

डॉ. कुसुम लूणिया

वर्तमान सूचना क्रांति के युग में स्पीड का बहुत महत्त्व है। जो फास्ट है, वही फर्स्ट होने का दावा करते हैं। अठारहवीं सदी की तरह आराम से भोजन बनाने एवं खाने का जमाना चला गया। आज फास्ट फूड बच्चों से लेकर बुजुर्गों तक की पसंद बन गया है। इसके प्रवचन के बावजूद यह आवश्यक है कि हम इसके हानि-लाभ पर गौर करें और यह तय करें कि यह हमारे लिए कितना उपयोगी है।

भोजन हमारे शरीर के लिए आवश्यक है। इसके चार प्रमुख कार्य हैं : 1. जीवनी शक्ति को बढ़ाना, 2. शरीर को हृष्ट-पुष्ट रखना। 3. शरीर में अग्नि का दीपन (हाइजेशन) करना। 4. शरीर को शक्ति देना।

भोजन तीन प्रकार के होते हैं—

सात्विक—प्रकृति से मिलने वाले अनाज, दालें, मेवा, फल, साग-सब्जियाँ सात्विक भोजन की श्रेणी में आती हैं। इनके प्रचुर प्रयोग से बच्चों का सर्वांगीण विकास होता है। इससे व्यक्ति का तन, मन और मस्तिष्क तीनों स्वस्थ रहते हैं। विचार उन्नत होते हैं।

राजसिक आहार—तला-भुना, मसालेदार, घी, तेल की मात्रा अधिक हो, ऐसा भोजन राजसिक कहलाता है। यह भोजन पाचन की दृष्टि से गरिष्ट होता है। अत: आराम-तलबी पैदा करता है।

तामसिक आहार—जो आहार रेशे रहित, रसहीन और बासी होते हैं, वे इस श्रेणी में आते हैं। वर्तमान के फास्ट फूड और जंक फूड भी इसी श्रेणी में आते हैं। कुछ प्रसिद्ध फास्ट फूड के उदाहरणों से इसे और स्पष्ट करते हैं—

फ्रेंच फ्राई—बच्चों का फेवरेट, आलू से बना यह आइटम बहुत स्वादिष्ट लगता है किन्तु इसमें सिर्फ स्टार्च और फैट होता है, प्रोटीन बिल्कुल नदारद होता है।

बर्गर—मैदे के बने होने से पोषक तत्वों से खाली होता है।

पिज्जा—मैदे से बने होने से, बासी होने से पेट की बीमारियों को आमंत्रण देता है।

नूडल्स—मैदा से निर्मित एक दुष्पाच्य खाद्य पदार्थ।

चिप्स—चर्बी बहुत ज्यादा तथा कृत्रिम प्रिजरवेटिव से युक्त हमारे पाचन तंत्र को कमजोर करता है।

शीतल पेय—फास्फेरिक एसिड मिले होने से यह हड्डियों को कमजोर करता है।

प्रमुख चिकित्साशास्त्रियों, चिकित्सकों एवं डायटीशियन्स के अनुसार फास्ट फूड की लत घातक है। यह अनेक रोगों को आमंत्रण देता है।

मोटापे की समस्या—फास्ट फूड में कैलोरी और शुगर ज्यादा मात्रा में होती है, अत: इसके सेवन से वजन तेजी से बढ़ता है।

हृदय रोग—शरीर में कोलेस्ट्रोल की वृद्धि में फास्ट फूड की अहम भूमिका है। बढ़ता वजन हार्ट अटैक का कारण बनता है।

कैन्सर—रिसर्च के मुताबिक शुगर और फैट से भरे फास्ट फूड का सेवन करने से पेट में कैंसर का खतरा बढ़ जाता है। एक अन्य शोध के अनुसार फास्ट फूड प्रोस्ट्रेट कैंसर का भी कारण है।

डायबिटीज—इसके सेवन से डायबिटीज का खतरा काफी ज्यादा रहता है।

तनाव—जो लोग जीवन में जितना ज्यादा फास्ट फूड का सेवन करते हैं, उनमें तनाव का स्तर उतना ही बढ़ता जाता है।

थकान—फास्ट फूड खाने वाले व्यक्ति बहुत जल्दी थकते हैं, क्योंकि फास्ट फूड से पेट तो भर जाता है किन्तु पोषक तत्व नहीं मिलते। पर्याप्त प्रोटीन, विटामिन प्राप्त नहीं होने से शीघ्र ही थकान आ जाती है।

आस्टियोपेरिसिस—फास्ट फूड से हड्डियाँ बहुत जल्द कमजोर हो जाती हैं क्योंकि इसमें कैल्सियम नहीं होता।

फास्ट फूड शरीर पर गहरा असर करता है। मोटे तौर पर हम इसे यूँ समझें कि बच्चों को रोजाना 1600 कैलोरी की जरूरत होती है, जिसमें 50 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेड (रेशा), 20 प्रतिशत फैट (वसा) और 30 प्रतिशत प्रोटीन होना चाहिए। आजकल जो फास्ट फूड बाजार में उपलब्ध हैं, उनमें शर्करा और फैट तो हैं किन्तु फाइबर और प्रोटीन नहीं हैं। इनमें पाये जाने वाले कृत्रिम नमक और प्रिजरवेटिव्स स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं। फास्ट फूड में कुछ अंशों में ही पोषक तत्व होते हैं। उन्हें यथावत रखने के लिए 20 से 30 डिग्री सेल्शियस तापमान चाहिए। गरम जलवायु एवं खराब यातायात फास्ट फूड को खराब कर देते हैं।

वर्तमान युग में कौन-सा फूड खायें और खिलायें जो शीघ्र तैयार हो और पोषक एवं स्वादिष्ट भी हो। स्वीट कोर्न, पोपकार्न, मूँगफली के दानों की चाट, रोस्टेड चना, मूँग, गेहूँ, ताजा मिक्स फ्रूट सलाद, वेजिटेबल सलाद, घर में बने मिल्क शेक (बादाम, केला, चीकू व मैंगो आदि), दही, कस्टर्ड, लस्सी, छाछ, नींबू पानी, जलजीरा पानी, ताजा जूस आदि फास्ट फूड सुपाच्य, स्वादिष्ट एवं पोषक तत्त्वों से युक्त हैं। इन्हें आप अपनाएँ।

हमें उड़ते हवाई जहाज की छाया क्यों नहीं दिखाई देती?

किसी भी वस्तु की छाया इस बात पर निर्भर करती है कि उस वस्तु पर प्रकाश पड़ने का स्रोत क्या है और वह कितनी दूरी पर है तथा छाया कहाँ पड़े या जहाँ पड़े वहाँ छाया के पड़ने और दिखाई देने का क्या कोई उचित माध्यम है या नहीं? इसके अतिरिक्त प्रकाश देने वाला माध्यम किसी बिंदु पर प्रकाश डाल रहा है या वह चारों ओर फैल रहा है? यदि प्रकाश का स्रोत बिंदु स्रोत है तो उससे बनने वाली छाया गहरी काली होती है। जिसे हम प्रच्छाया कह सकते हैं। लेकिन सूर्य का प्रकाश बिंदु स्रोत नहीं है, उसका प्रकाश सभी ओर से है। इसलिए सुदूर आकाश में उड़ते हवाई जहाज की जो भी प्रच्छाया बनती है; उसके चारों ओर उपछाया भी बनती है। आकाश में हवाई जहाज बहुत छोटी वस्तु है, अतः उसकी प्रच्छाया और उपछाया इतनी बड़ी नहीं होती कि वे हमें चंद्रग्रहण की तरह दिखाई देने लगे। हमें हवाई जहाज की छाया तभी दिखाई देती है, जब वह कम ऊँचाई पर उड़ रहा होता है। इस समय उसकी छाया धरती तक आ जाती है और उसे हम देख सकते हैं। लेकिन आकाश में ऊँचे उड़ रहे हवाई जहाजों की छाया धरती को नहीं छू पाती है, इसलिए हम उड़ते हवाई जहाज की छाया नहीं देख पाते हैं।

बरतन पर कैसे व क्यों चिपकता है टेफ्लॉन?

पहले, खाने में चिकनाई का अधिक उपयोग पकाते समय भोजन को बरतन से चिपकने से बचाने के लिए होता था। अब इसके लिए टेफ्लॉन नामक रसायन की कोटिंग वाले बरतनों का उपयोग किया जाता है। किसी भी चीज को चिपकने से बचाने वाला यह पदार्थ आखिर बरतन से कैसे चिपक जाता है? टेफ्लॉन का नाम गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड में पृथ्वी के सर्वाधिक चिकने (फिसलने वाले) पदार्थ के रूप में दर्ज है। इसके बाद भी बरतनों पर इसकी कोटिंग हो जाती है। टेफ्लॉन वास्तव में टेट्राफ्लूरोइथाइलिन है। इसकी खोज वैज्ञानिक डॉ. रॉय प्लंकेट ने दुर्घटनावश की थी। वे अच्छी कूलेंट गैस बनाने का प्रयास कर रहे थे, भूलवश वह गैसों के मिश्रण को रात भर के लिए एक डिब्बे में छोड़ गए। जब वे लौटे, तो उन्होंने देखा कि गैस तो वाष्पित हो चुकी है, उसकी जगह मोम जैसा द्रव है जो गलाने वाले रसायनों में डालने के बाद भी जस का तस है। इसका उपयोग पेरिस में रहने वाले एक व्यक्ति ने बरतनों पर किया था, उसने इसे सैंडब्लास्ट के जरिये खुरदुरा बनाया और फिर उसमें प्राइमर लगाकर उसे बरतन से जोड़ दिया।

बच्चों के रोग में सामान्य उपचार

बच्चों के मिट्टी खाने से रोग

- मिट्टी खाने से पांडू नामक रोग हो जाता है। ऐसे बच्चों को पर्याप्त मात्रा में टमाटर का रस देने से काफी लाभ होता है।
- बच्चों को मिट्टी या कोयला खाने की आदत छुड़ाने के लिए चूने के पानी के साथ अजवायन देने से फायदा होता है।
- टमाटर, आलूबुखारा, स्ट्राबेरी, खजूर, मुनक्का आदि का सेवन लाभप्रद है।

बच्चों के दस्त रोग

- पेट फूलना, दस्त, खाँसी, सर्दी, जुकाम, उल्टी होने पर तुलसी के पत्तों के रस में चीनी मिलाकर शर्बत बना लें। इनकी एक छोटी चम्मच पिलाएँ, ये सब रोग ठीक हो जाएँगे। नियमित प्रयोग से बच्चा स्वस्थ रहता है। बच्चों का उत्तम स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए तुलसी, अदरक का रस गरम करके ठण्डा होने पर शहद मिलाकर पिलाएँ।
- छोटे बच्चों के पतले दस्त, पेचिश में 6 ग्राम सौंफ, 82 ग्राम पानी में उबालें। जब पानी आधा रह जाए तब उसमें एक ग्राम काला नमक डाल दें। बच्चों को 12 ग्राम पानी दिन में तीन बार देने से बहुत लाभ होता है।
- जायफल को पानी या कच्चे दूध में घिस कर तीन बार नित्य पिलाने से दस्त बन्द हो जाते हैं।
- जल की अशुद्धियों के कारण बारिश में बच्चों को प्राय: पेचिश व मरोड़ की शिकायत रहती है। वैसे भी इस मौसम में आँतों के कीटाणु सक्रिय हो जाते हैं जो इन रोगों को फैलाते हैं। इस रोग से बचने के लिए आधा तोला सौंठ को बारीक घिस लीजिए और इस घिसी हुई सौंठ को देसी घी में भूनकर थोड़ी चीनी मिलाकर पकाएँ और गाढ़ी चटनी-सी होने पर उतार लें। दिन में पाँच-छह बार बच्चों को यह चटनी चटाती रहें, इससे लाभ होगा।
- एक चम्मच कच्चे दूध में 2-3 बूँद नींबू कर रस मिलाकर दो-तीन बार दिन में देने से लाभ होगा। अधभुनी सौंफ को पीसकर उसमें शकर मिलाकर दिन में तीन-बार एक चाय का चम्मच ठण्डे जल से खिलाने पर लाभ होगा।
- बच्चों को हरे-पीले दस्त होने पर जायफल को जल के साथ घिसकर नाभि पर लेप करने से लाभ होता है।
- बच्चों के पेट-दर्द में, सर्दी के दस्त, अफारा आदि में हींग को पानी में घोलकर गुनगुना ही बच्चों के पेट पर लगा देना चाहिए। इससे उनको तत्काल आराम मिलेगा।
- अनार के फूल 20 ग्राम, जावित्री 5 ग्राम, दालचीनी 10 ग्राम, धनिया 10 ग्राम, कालीमिर्च 5 ग्राम—इन सबको पीसकर चौथाई से आधा चम्मच शहद के साथ देने से बच्चों का अतिसार नष्ट होता है।
- बालकों के अतिसार में तथा अन्य उदर रोगों में संतरे के रस में बराबर मात्रा में ताजा जल मिलाकर थोड़ा-थोड़ा माता के दूध अथवा गाय के दूध के साथ 3-3 घंटे के अंतराल पर देने से लाभ होता है।
- जामुन की छाल का रस। 1 से 2 चम्मच, चौथाई कप बकरी के दूध के साथ देने से बच्चों के पतले दस्त ठीक हो जाते हैं।
- बरगद के पत्ते तोड़ें तो दूध निकलेगा। उस दूध को नाभि में व उसके आस-पास लेप करें। यह थोड़ी ही देर में अपना प्रभाव दिखाएगा।
- बच्चा छोटा हो तो एक-दो चम्मच दही में एक रत्ती फिटकरी भस्म घोलकर चटा दें। यह क्रिया आप एक-एक घण्टे से दोहराते रहें। तीन-चार घंटे में कष्ट दूर हो जाएगा, इस बीच दूध न पिलाएँ। बच्चा बड़ा हो तो फिटकरी डेढ़ ग्राम तथा दही की मात्रा और बढ़ा दें।
- बालकों के पुराने दस्त तथा दूषित पाचकाग्नि पर जामुन के वृक्ष की अन्तर की छाल का ताजा रस बकरी के दूध में डालकर देने से बहुत लाभ होता है।
- दस्तों में मरोड़ हो तो आधी अखरोट पानी के साथ नाभि पर लेप करने से मरोड़ दूर हो जाएगी।
- जब बच्चे को दूध नहीं पच रहा हो, दूध पीते ही उल्टी या दस्त हो जाता हो तब दूध बन्द कर देना चाहिए। दूध के स्थान पर सेव का रस देने से उल्टी-दस्त में आराम आ जाता है।
- प्याज का रस नाभि पर लगाने से दस्त बन्द हो जाते हैं।
- छोटे बच्चों को दस्त हों तो गरम दूध में चुटकी भर पिसी हुई दालचीनी मिलाकर पिलाएँ।
- बच्चों को जुकाम के कारण दस्त हों तो जायफल एवं सौंठ को गाय के घी में घिसकर चटाने से लाभ होता है एवं दस्त बन्द हो जाते हैं।
- बच्चों को दस्त लगने पर जायफल को पानी में घिसकर लेप-सा बना लें। इस लेप को एक चम्मच पानी में घोलकर दिन में दो बार दें। जब तक दस्त बन्द न हों, सेवन कराएँ।
- जामुन की कच्ची गुठलियों के रस से बच्चों की पेचिश ठीक होती है।
- जायफल को पानी में घिसकर तीन बार नित्य पिलाने से दस्त बन्द हो जाते हैं।
- बच्चों को डिसेण्ट्री होने पर कच्चे आम की गुठली को पानी में घिसकर नाभि के पास लगाएँ। **संकलन-कनिका जैन**

ज्ञानशाला

एक परिचय

परम पूज्य आचार्य श्री तुलसी ने बालकों को सुसंस्कारी बनाने हेतु ज्ञानशाला के रूप में एक आयाम प्रदान किया। उनका मंतव्य था कि बालक समाज व देश का एक महत्वपूर्ण घटक है, जिसमें समाज का भविष्य अँगड़ाई लेता है। उसका सम्यक् सुसंस्कारमय निर्माण स्वस्थ समाज व देश के निर्माण की आधारशिला है। एक संस्कारी बालक स्वयं के जीवन व अपने परिवार के लिए आदर्श कार्य करता है। **ज्ञानशाला** ऐसा उपक्रम है जहाँ बाल पीढ़ी का संस्कार-निर्माण होता है।

साधु-साध्वियों, समण-समणियों के साथ समर्पित कार्यकर्ता इसमें जुटे। देश के कोने-कोने में ज्ञानशालाओं का क्रम प्रारंभ हुआ। बड़ी संख्या में प्रशिक्षक तैयार हुए। देश में ज्ञानशाला का एक सुन्दर वातावरण निर्मित हुआ है।

ज्ञानशाला : एकरूपता के मानक

उपक्रम का नाम	:	ज्ञानशाला
प्रतीक	:	बालक के हाथ में खुली पुस्तक जिसके एक भाग में 'नाणं पयासयरं' एवं दूसरे भाग में 'ज्ञानशाला' अंकित
संभागी बालक- बालिकाओं की उम्र	:	4 से 14 वर्ष
गणवेश	:	सफेद (श्वेत परिधान)
अभिवादन	:	जय जिनेन्द्र
घोष	:	घर-घर जागे सद्संस्कार : ज्ञानशाला का यह उपहार
ज्ञानार्थी बेज	:	ज्ञानशाला प्रतीक युक्त
ज्ञानशाला स्थल का बैनर	:	एक निश्चित आकार, निश्चित मेटर
		एवं कलर कोम्बीनेशन के साथ पूरे देश में एक जैसा बैनर
ज्ञानशाला कार्य वर्ष	:	1 जनवरी से 31 दिसम्बर (कलेण्डर वर्ष)
ज्ञानशाला वंदना	:	अर्हं अर्हं की वंदना फले
ज्ञानशाला उपासना किट	:	बालकोपयोगी, बालकोचित साइज में आसन, चादर, मुखवस्त्रिका, माला, पूंजणी, रुमाल, नोटबुक, पेन (सभी सुंदर बैग सहित)

ज्ञानशाला रजत जयंती समारोह

बालक समाज व देश का एक महत्वपूर्ण घटक है जिसमें समाज का भविष्य अँगड़ाई लेता है। बालक का सुसंस्कारमय निर्माण स्वस्थ-समाज व देश के निर्माण की आधारशिला है। एक संस्कारी बालक स्वयं के जीवन व अपने परिवार के लिए आदर्श कार्य करता है। ज्ञानशाला एक ऐसा उपक्रम है जहाँ बालपीढ़ी का सही निर्माण होता है।

जैन श्वेताम्बर तेरापंथ धर्मसंघ के नवमाधिशास्ता आचार्य श्री तुलसी दूरदर्शी व स्वप्नदर्शी धर्मगुरु थे। ज्ञानशाला उनका एक सपना था। उनका यह सपना आज कितना शतशाखी होकर फलदायी बना है। आचार्य श्री महाप्रज्ञ से अनंत ऊर्जा प्राप्त होती रही है। पूज्य आचार्य श्री महाश्रमण की प्रारंभ से सतत प्रेरणा व असीम कृपादृष्टि ज्ञानशाला को प्राप्त हो रही है। आपश्री के नीति-निर्देशों के अनुरूप ज्ञानशाला हर दृष्टि से गतिशील है।

वर्तमान में ज्ञानशाला के केन्द्रीय संचालन का दायित्व जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा ज्ञानशाला प्रकोष्ठ के माध्यम से अत्यन्त कुशलता से सँभाल रही है। सभी संघीय संस्थाओं का सहयोग प्राप्त है। चारित्रात्माओं की सतत प्रेरणा, समणीवृंद का श्रम सदैव इसका आधार रहता है। प्रशिक्षकों व कार्यकर्ताओं का पूरा योग है। आज ज्ञानशाला मिशन एक शक्तिशाली नेटवर्क बना हुआ है।

ज्ञानशाला प्रारूप के आधार पर ज्ञानशाला प्रारंभ हुए पच्चीस वर्ष सम्पन्न हो रहे हैं। इस संदर्भ में **'ज्ञानशाला रजत जयंती वर्ष'** हम सबके लिए स्वर्णिम अवसर है। इसके लिए सभी को कटिबद्ध बनना है। इस वर्ष के लिए निर्णीत कार्यक्रमों की क्रियान्विति के लिए हम सबको तत्पर व सक्रिय रहना है।

ज्ञानशाला : इतिहास के आइने में

तेरापंथ अमृत संसद द्वारा महासभा को ज्ञानशाला का उत्तरदायित्व	: 15 अगस्त 1991
महासभा कार्यसमिति मीटिंग में निर्णय	: 12 अप्रैल 1992
महासभा द्वारा प्रथम बार बजट निर्धारण	: 25 जुलाई 1992
ज्ञानशाला हेतु प्रथम गृहस्थ प्रभारी व्यवस्था	: सन् 1992
ज्ञानशाला में विविध पुरस्कारों का प्रारंभ	: सन् 1995
ज्ञानशाला में प्रथम बार संत प्रभारी व्यवस्था	: 1 फरवरी 2001
ज्ञानशाला ज्ञानार्थी पाठ्यक्रम का प्रारंभ	: सन् 2002
ज्ञानशाला प्रशिक्षक परीक्षा प्रारंभ (दो श्रेणी)	: सन् 2002
ज्ञानशाला प्रशिक्षक परीक्षा प्रारंभ (तीनों श्रेणी)	: सन् 2004
ज्ञानशाला ज्ञानार्थी परीक्षा प्रारंभ	: सन् 2009

निर्धारित परियोजना

- ज्ञानशाला प्राध्यापकों (Train the Trainer) का निर्माण
- ज्ञानशाला में प्रतिक्रमण व पच्चीस बोल कंठस्थ कराने का लक्ष्य
- ज्ञानशाला सोविनियर का प्रकाशन
- 'शिशु संस्कार बोध' का नवीन आकर्षक कलेवर व सामग्री के साथ प्रकाशन
- उत्तीर्ण ज्ञानशाला प्रशिक्षकों के लिए रिफ्रेसर कोर्स का निर्माण
- ज्ञानशाला से संबंधित गीतों की सी.डी. का निर्माण
- ज्ञानशाला प्रशिक्षकों की राष्ट्रीय स्तर पर कार्यशाला का आयोजन
- ज्ञानशाला वेबसाइट का प्रारंभ
- ज्ञानशाला के लिए उपयोगी साहित्य का प्रकाशन
- प्रचारात्मक साहित्य का व्यापक प्रसार
- प्रत्येक तेरापंथ भवन में 'ज्ञानशाला पुस्तकालय' का प्रारंभ
- ज्ञानशाला की महत्ता को रेखांकित करने वाली डाक्युमेंट्री तैयार करना
- संघीय पत्र-पत्रिकाओं में 'ज्ञानशाला विशेषांक' के रूप में प्रकाश में लाने का प्रयास
- पंच दिवसीय ज्ञानार्थी शिविरों का आयोजन
- ज्ञानशाला के समग्र डाटा का संकलन
- ज्ञानशालाओं व ज्ञानार्थियों के संख्यात्मक व गुणात्मक अभिवृद्धि का प्रयास
- श्रद्धा के छोटे-छोटे क्षेत्रों को भी ज्ञानशाला नेटवर्क में लाने का निर्णय
- स्थानीय सभी ज्ञानशालाओं में पृथक्-पृथक् रजत जयंती समारोह का ज्ञानशाला प्रकोष्ठ द्वारा निर्धारित प्रारूप के अनुसार समायोजन।

ज्ञानशाला : अथ से अद्य

मुनि उदित कुमार
(ज्ञानशाला आध्यात्मिक पर्यवेक्षक)

संस्कारों की संपदा, है उत्कृष्ट अमूल्य।
धन-वैभव संसार का, रखता है क्या मूल्य?

ज्ञानशाला के जनक आचार्य श्री तुलसी ने अपनी अमर रचना 'संस्कार बोध' में कितना सटीक लिखा है। पूज्य गुरुदेव तुलसी का यह स्पष्ट मंतव्य था कि धन, वैभव, सत्ता का अपनी जगह मूल्य हो सकता है पर जीवन की सबसे बड़ी संपदा संस्कार है, यह संपदा अमूल्य है, सर्वोत्कृष्ट है।

मूल्यों का क्षरण

आज हम भारी सांस्कृतिक उथल-पुथल व मूल्यों के अकाल के दौर से गुजर रहे हैं। अधिकांश लोग अपने सुख में लिप्त हैं और उन्हें इस बात का अहसास नहीं कि जीवन से सत्य, निष्ठा, नैतिकता एवं मानवीय मूल्यों का क्षरण होता जा रहा है। आज काफी लोग क्रोध, अहंकार, कपट, लालच, ईर्ष्या आदि नकारात्मक मनोवृत्तियों एवं विकारों से ग्रस्त होते जा रहे हैं। शीघ्रातिशीघ्र अर्थार्जन की उत्कट आकांक्षा व्यक्ति को अनैतिक राह पर चलने के लिए बाध्य कर देती है। इस कारण आवेश, लालसा व हिंसा में अभिवृद्धि हो रही है और शांति, प्रेम, दया, धैर्य एवं सहिष्णुता के भाव तिरोहित हो रहे हैं। अपने निहित स्वार्थ की संपूर्ति हेतु व्यक्ति धोखाधड़ी और अपराध तक भी करने में संकोच नहीं करता।

वर्तमान में व्यक्ति पहले की अपेक्षा अधिक समृद्ध, शिक्षित और वैज्ञानिक सोच वाला है, पर इसके साथ वह अधिक स्वार्थी, लोभी और आक्रामक भी हो गया है। व्यक्ति का सामाजिक जीवन अस्त-व्यस्त हो गया है। वह स्वयं को अशांत व उद्विग्न अनुभव करता है। इस समस्या का समाधान तुरंत खोजना अत्यंत आवश्यक हो गया है, अन्यथा वह समय दूर नहीं, जब नैतिकता, कर्त्तव्य-निष्ठा, सौहार्द आदि मात्र कथाओं में सिमट कर रह जाएँ। कहीं ये मूल्य समाज से लुप्त न हो जाएँ।

बने आदर्श व्यक्तित्व

मूल्यों के क्षरण व चारित्रिक पतन का मुख्य कारण है—व्यक्ति की बाल्यावस्था में जीवन-मूल्यों का आत्मसात न होना। क्रोध, हिंसा आदि निषेधात्मक भावों का उन्मूलन एवं विनम्रता, प्रेम आदि विधायक भावों का संप्रेषण व अवतरण बचपन में ही व्यक्ति के अवचेतन में हो जाए तो इन जीवन-मूल्यों का परिपालन उसका स्वभाव बन जाता है। वह एक आदर्श एवं अनुकरणीय व्यक्तित्व के रूप में ढल जाता है। ऐसा व्यक्ति न केवल स्वयं के लिए अपितु अपने परिवार, समाज तथा देश के लिए अत्यन्त मूल्यवान और उपयोगी हो जाता है।

एक दार्शनिक का कथन है कि चरित्र एक वृक्ष है तो मूल्य व प्रवृत्तियाँ उसके बीज के सदृश हैं। अवचेतन वह क्षेत्र है जहाँ बीजारोपण किया जाता है। परिवेश एवं परिस्थितियाँ उसके अंकुरण के लिए जल, वायु, खाद आदि का कार्य करती हैं। मानवीय मूल्य व सद्संस्कार बचपन में ही व्यक्ति के अवचेतन में रोपित होकर उसके चरित्र का निर्माण करते हैं।

आचार्य तुलसी कई बार अपने प्रवचनों में कहा करते थे कि कुछ बच्चों में जन्म के साथ मूल्य विद्यमान रहते हैं तो कई अपने माता-पिता व अपनी पारिवारिक परंपरा से उसे ग्रहण करते हैं। कुछ अपने आस-पास के परिवेश व उन व्यक्तियों से इसे प्राप्त करते हैं जिनके साथ उनका अधिक संपर्क रहता है। कुछ बच्चे किशोर के रूप में सयाने हो जाते हैं। वे हर बात को अपनी बुद्धि और तर्क की कसौटी पर परखना प्रारंभ कर देते हैं। किशोरावस्था के बाद व्यक्ति के स्वभाव को बदल पाना काफी कठिन होता है। इन चार अवस्थाओं में बालक द्वारा आत्मसात की गई अभिवृत्तियाँ व मूल्य सकारात्मक या नकारात्मक कोई भी हो सकते हैं।

चतुर्मुखी शिक्षा से सर्वांगीण विकास

आज की शिक्षा पद्धति में डिग्रीधारी व्यक्ति को शिक्षित माना जाता है, भले ही उसमें सद्चरित्र, सद्संस्कार व मानवीय गुणों का अभाव हो। आज की शिक्षा व्यवसायपरक व पुस्तकीय ज्ञान का अध्ययन मात्र बनकर रह गई है। सुप्रसिद्ध दार्शनिक आचार्य महाप्रज्ञ कहा करते थे कि वर्तमान शिक्षा गलत नहीं, अपर्याप्त है। अपर्याप्त शिक्षा के संदर्भ में उनका अभिमत था कि सर्वांगीण शिक्षा चतुर्मुखी होती है। इस शिक्षा के चार आयाम हैं—बौद्धिक विकास, शारीरिक विकास, मानसिक विकास और भावात्मक विकास। आज की शिक्षा में बौद्धिक व शारीरिक शिक्षा पर तो बल दिया जाता है पर मानसिक व भावात्मक विकास पर ध्यान अत्यन्त न्यून है। इन चारों के समन्वित व सशक्त स्वरूप के बिना व्यक्ति का

सर्वांगीण विकास संभव नहीं है। यह विकास व्यक्ति की बाल्यावस्था में शुरू हो जाना चाहिए।

जो शिक्षा व्यक्ति में जीवन की चुनौतियों का सामना करने की योग्यता उत्पन्न नहीं करती हो, चारित्रिक शक्ति का उन्मेष न करती हो, क्या वह वस्तुत: शिक्षा कहलाने के योग्य है? वास्तविक शिक्षा वह है जो व्यक्ति का आत्मोत्कर्ष करती हो, जीवन की चुनौतियों का साहसपूर्वक मुकाबला करना सिखाती हो। व्यक्ति में बचपन से ही सद्‌गुणों का अवतरण कर उसका चारित्रिक, भावात्मक एवं आध्यात्मिक विकास कराना परम आवश्यक है।

मात्र व्यावसायिक वैज्ञानिक और तकनीकी का ज्ञान अपूर्ण ज्ञान है। 'अर्ध विद्या भयंकरी'। वस्तुत: अपूर्ण ज्ञान खतरनाक होता है। सद्‌संस्कारों के अभाव में व्यक्ति धोखेबाज, स्वार्थी, भ्रष्ट एवं समाज के लिए हानिकारक बन सकता है। यह आवश्यक है कि आधुनिक शिक्षा के साथ-साथ मानवीय मूल्य एवं सद्‌गुण समाविष्ट हों। जो व्यक्ति सद्‌संस्कारों एवं मानवीय मूल्यों को अपने आचरण एवं व्यवहार में अपनाता है तथा आधुनिक विज्ञान और तकनीकी का ज्ञान रखता है और उनका प्रयोग करता है, वह आज के युग में उच्च लक्ष्यों को प्राप्त कर सकता है।

संस्कारों से संस्कृति का निर्माण

संस्कार एक प्रक्रिया है जिससे व्यक्ति में स्थित निषेधात्मक अभिवृत्तियों का शोधन करके व्यक्तित्व का रूपांतरण किया जाता है। ऐसा व्यक्ति एक आदर्श व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत होता है। संस्कार से अंत:करण शुद्ध होता है और मन का उदात्तीकरण होता है। संस्कार मानव को सद्विचार, सदाचार व मानवीय गुणों से युक्त बनाते हैं। संस्कार से संस्कृति बनती है और इससे मूल्य विकसित होते हैं। संस्कार एवं संस्कृति में गहरा तादात्म्य है, संस्कृति का मूल स्रोत संस्कार ही है। संस्कार व्यक्तिपरक हैं, समष्टिपरक हैं। संस्कार व्यक्ति को सुधारते हैं जबकि संस्कृति समष्टि-समाज को सुधारती है। संस्कार वह सशक्त नींव है जिस पर संस्कृति की विशाल इमारत को खड़ा किया जा सकता है। संस्कृति को जीवित व स्वस्थ रखने के लिए संस्कारों की अपरिहार्य आवश्यकता है।

जन्म के समय बालक कच्चे घड़े या कच्चे हीरे के समान होता है। उसको जिस रूप में ढालना चाहें, बनाना चाहें तो उसे काफी हद तक ढाला जा सकता है। संस्कारपरक प्रकल्पों के द्वारा परिष्कार, परिशोधन एवं परिवर्तन घटित हो सकता है। सद्‌संस्कारों का यदि समुचित अवतरण हो जाए तो एक आदर्श, कर्त्तव्यनिष्ठ एवं अनुकरणीय व्यक्तित्व का निर्माण हो सकता है। ऐसा व्यक्ति मूल्यवान एवं उपयोगी होकर अपने प्रति व परिवार तथा समाज के प्रति अपने दायित्व निर्वहन में सक्षम बन सकता है।

संस्कार की सतत प्रवाहमान प्रक्रिया

पारंपरिक ज्ञान एवं संस्कार प्रदान करने के विविधमुखी उपक्रम हर समय में चलते रहे हैं। विभिन्न धर्मों, पंथों, वर्गों एवं समाजों में अपनी-अपनी संस्कृति, परंपरा एवं तत्त्वज्ञान के संरक्षण, संपोषण एवं संवर्धन हेतु अनेकविध प्रकल्प चलते रहते हैं।

जैन धर्म में तत्त्वज्ञान व सैद्धांतिक ज्ञान के कंठस्थीकरण की लंबी परंपरा है। एक समय ऐसा भी था जब हमारा विशाल वाङ्‌मय लिपिबद्ध नहीं था। वह मात्र कंठस्थ था और एक-दूसरे से संक्रात होकर वह विशाल ज्ञान राशि सुरक्षित बनी हुई थी। इसी तरह हमारे पारंपरिक संस्कार भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी चल रहे थे। यह क्रम सामान्य तौर पर साधु वर्ग में था।

श्रावक समाज में भी तत्वज्ञान सीखने के साथ बारहव्रत धारण की एक सर्वसामान्य परंपरा रही है। यह क्रम भी प्रलंब काल से प्रवहमान है। जहाँ साधु-साध्वियों का नियमित चतुर्मास एवं प्रवास होता, वहाँ तत्त्वज्ञान व संस्कार का क्रम अधिक दृढ़ व मजबूत रहता था।

यह भी एक सामान्य क्रम रहा है कि अलग-अलग आयु-वर्ग के व्यक्तियों के लिए अलग-अलग कक्षाएँ लगती रही हैं। दोपहर में बहिनों के लिए प्रशिक्षण चलता है। इसमें तत्त्वज्ञान, व्रत धारण व अन्य समसामयिक विषयों पर मार्गदर्शन मिलता है।

सायं प्रतिक्रमण से पूर्व या पश्चात् स्थानीय सुविधानुसार बच्चों की कक्षा नियोजित हुआ करती है। इसमें प्रारंभिक ज्ञान सिखाया जाता है। छोटी-छोटी घटनाओं और कथाओं के माध्यम से बच्चों में विनम्रता, अनुशासन, सदाचार, एकाग्रता, सहनशीलता आदि संस्कारों के संप्रेषण का प्रयास चलता है।

तेरापंथ में ज्ञान व संस्कार पर बल

तेरापंथ जैन धर्म का अर्वाचीन संस्करण है। आचार्य भिक्षु इसके संस्थापक रहे हैं। ज्ञान व संस्कार देने में आचार्य भिक्षु रातों में भी जगे, ऐसा इतिहास में पढ़ते हैं। द्वितीय आचार्य भारमलजी तो बालिका-शिक्षा को विशेष अहमियत देते थे। उनका यह मंतव्य था कि एक बालिका का ज्ञान व संस्कार-संपन्न बनना इसलिए महत्त्वपूर्ण है जिससे दोनों घरों (पीहर व ससुराल) में धर्म के संस्कारों की उजास व दृढ़ता बनी रह सके। उत्तरवर्ती आचार्यों के शासन-काल में बच्चों को जैन विद्या, तत्त्व, सिद्धांत आदि का ज्ञान देने व संस्कारों के संरक्षण का प्रयास सुव्यवस्थित चलता रहा।

ज्ञानशाला की पृष्ठभूमि

एक जमाना था, जब संयुक्त परिवार की पद्धति सफलतापूर्वक सुचारु रूप से चल रही थी। परिवार में मुखिया के रूप में वृद्ध व अनुभवी-जनों की उपस्थिति हुआ करती थी। सामाजिक समरसता का अच्छा वातावरण था। पारंपरिक मातृत्व-भाव उल्लेखनीय था। तत्कालीन गुरुकुलों का वातावरण सात्विक रहता था। धार्मिक संसर्ग व उसके संस्कारों से व्यक्ति अनुप्राणित रहता था।

जमाना बदला। सामाजिक संरचनाओं में परिवर्तन आने लगा। विशेषतः औद्योगिकीकरण, नगरीकरण एवं संयुक्त परिवारों के विखंडन से समाज में मूल्यों का ह्रास होता जा रहा है। नई पीढ़ी के सामाजिक सरोकार न्यून होते जा रहे हैं और उनका अपेक्षित भावात्मक एवं आध्यात्मिक विकास नहीं हो पा रहा है। औद्योगिकीकरण, बाजारीकरण तथा शहरीकरण के कारण लोगों का गाँवों से नगरों व महानगरों की ओर पलायन हुआ है और हो रहा है।

गाँवों में सहज सुलभ आध्यात्मिक एवं प्राकृतिक वातावरण व परिवेश था जो नगरों में बच्चों के लिए दुर्लभ एवं नगण्य-सा है।

गाँवों में प्रायः नियमित व निरंतर साधु-साध्वियों का प्रवास उपलब्ध होता रहता था। इससे बच्चों का सहज संपर्क बना रहता था। अन्य संपर्क नगण्य-से होते थे। शहरीकरण होने व उसमें भी उनके विस्तार के कारण संपर्क की यह कड़ी कमजोर होती चली गई। नगरों व महानगरों में सहशिक्षा आम बात है। स्कूलों व कॉलेजों में विभिन्न जाति, वर्ग व धर्म के विद्यार्थियों के साथ अपने विद्यार्थियों का सह-शिक्षण भी जाने-अनजाने जहाँ विविधमुखी अनुभवों में अभिवृद्धि करता है, वहाँ कुछ विकृतियाँ भी उत्पन्न हो जाती हैं। शहरों में जहाँ निवास-स्थान होता है, वहाँ पास-पड़ौस में विभिन्न धर्मों व जातियों के लोग रहते हैं। संस्कारों की कमी के चलते उनके संस्कार हावी हो सकते हैं। आस-पास विभिन्न धर्मों के स्थान होते हैं, उनका प्रभाव भी कभी-कभी पड़ जाता है।

आचार्य तुलसी का मिला आशीर्वाद

तेरापंथ धर्मसंघ के नवमाधिशास्ता आचार्य श्री तुलसी दूरदर्शी व स्वप्नदर्शी धर्मगुरु थे। धर्माचार्यों की शृंखला में वे अपने समय के अत्यन्त सम्माननीय, बहुचर्चित एवं समर्थ हस्ताक्षर थे। उन्हें कार्य करने का प्रलंब काल मिला। उनके शासन-काल में संघीय परिप्रेक्ष्य एवं सार्वजनिक क्षेत्र के अनेक उपक्रम प्रारंभ हुए। गुरुदेव तुलसी ने हर योजना को कसौटी पर कसा और उनका शुभारंभ किया। उस प्रकल्प के लिए उपयुक्त व्यक्तियों का नियोजन करते एवं समय-समय पर उनको प्रोत्साहित करते। बीच-बीच में वे प्रगति का जायजा भी लेते रहते थे और तदनुरूप समग्र रूप से पथदर्शन भी करते थे।

सन् 1991 का समय। आचार्य श्री तुलसी का प्रातःकालीन प्रवचन चल रहा था। प्रवचन के दौरान गुरुदेवश्री ने प्रसंगवश कहा—''बच्चों में सद्संस्कार आएँ व सुरक्षित रहें, इस दृष्टि से अभिभावकों को सजग रहना जरूरी है। जिस तरह से आप लोग भावी पीढ़ी के संस्कार-निर्माण के प्रति उदासीन हैं, यही क्रम यदि रहा तो कहीं ऐसा न हो कि यह पीढ़ी आपके हाथ से निकल जाए।'' गुरुदेव के इन शब्दों में पीड़ा स्पष्ट रूप से झलक रही थी।

प्रवचन के कार्यक्रम के बाद पदमचंदजी पटावरी ने आचार्यश्री के दर्शन किए और निवेदन किया—''गुरुदेव! आपने कैसे शब्द फरमाए हैं? आपकी दृष्टि प्राप्त हो तो मैं इस दिशा में काम कर सकता हूँ। बाल पीढ़ी के संस्कार-निर्माण की दिशा में एक विधिवत् अभियान के उत्स का वह मूल्यवान क्षण था।

दृष्टि से सृष्टि का प्रारंभ

आचार्य श्री तुलसी ने असीम अनुग्रह करते हुए यह उत्तरदायित्व पदमचन्दजी पटावरी को सौंपा। पटावरीजी जमीनी श्रावक कार्यकर्त्ता हैं जो समाज की गतिविधियों से काफी वाकिफ रहे हैं, समाज की भावनाओं को समझते रहे हैं और विभिन्न संस्थाओं में सक्रियता से सम्पृक्त रहे हैं। पटावरीजी ने मुनि मधुकरजी व मुनि धर्मरुचिजी से चिंतन-मंथन किया और उसी वर्ष (सन् 1991) चार पृष्ठों का 'ज्ञानशाला प्रारूप' तैयार किया। उसी समय एक वाक्य निर्धारित हुआ—''घर-घर जागे सद्संस्कार, ज्ञानशाला का यह उपहार।'' कालान्तर में यही वाक्य ज्ञानशाला का मुख्य नारा बन गया।

पहले भी हुए प्रयास

ज्ञानशाला को विकसित करने के लिए पूर्व में विविध प्रयत्न हुए। भगवान महावीर की निर्वाण शताब्दी वर्ष (1974-75) में, आचार्य श्री तुलसी ने ज्ञान, दर्शन, चारित्र व तप की विशेष अभिवृद्धि हो, इस हेतु समाज के लिए पन्द्रह सूत्री कार्यक्रम प्रस्तुत किया। इसमें पहला बिन्दु ज्ञानशाला का था। ज्ञानशाला के बारे में गुरुदेव का पथदर्शन रहा—''बालक-बालिकाओं में संस्कार-निर्माण की दृष्टि से ज्ञानशाला बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। प्रत्येक क्षेत्र इसकी उपयोगिता को समझे और अपने यहाँ इस क्रम को चालू करे।''

जैन विश्व भारती (शिक्षण विभाग) द्वारा जारी सूचना के अनुसार जैविभा द्वारा 23 मई से 21 जून 1978 तक ज्ञानशाला शिक्षक प्रशिक्षण शिविर का आयोजन तय किया गया पर

किन्हीं कारणों से यह संभव नहीं हो पाया।

1 से 5 जनवरी 1986 को कानोड़ (मेवाड़) में आचार्य श्री तुलसी एवं युवाचार्य श्री महाप्रज्ञ के सान्निध्य में श्रावक सम्मेलन आयोजित हुआ। उसके विचारणीय विषयों में प्रथम विषय था—''भावी पीढ़ी और संस्कार निर्माण।'' अनेक सदस्यों ने अपने विचार व सुझाव प्रस्तुत किए। प्राप्त सुझावों के आधार पर प्रारूप बनाने के लिए चार सदस्यीय उपसमिति बनाई गई। दूसरे दिन कुछ संशोधनों के साथ इसे पारित किया गया। यह प्रारूप अच्छा बना पर इसमें भावी पीढ़ी के रूप में युवाओं व किशोरों पर मुख्य रूप से ध्यान केन्द्रित किया गया था।

प्रशिक्षण एवं प्रयोग के अद्भुत व सफल प्रयोग

योगक्षेम वर्ष में प्रज्ञा-पर्व की समग्र व्यवस्था को समायोजित करने हेतु प्रज्ञा-पर्व समिति बनी। समिति ने वर्ष भर के कार्यक्रमों का जो निर्धारण किया, उनमें एक ज्ञानशाला प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविर की रूपरेखा बनाने, उसके लिए नाम संकलित करने और उसकी आयोजना हेतु जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा को जिम्मा सौंपा गया। महासभा की 1 दिसम्बर 1988 की कार्यसमिति की बैठक में इस आशय का निर्णय लिया गया। योगक्षेम वर्ष का प्रस्तावित ज्ञानशाला शिक्षक-प्रशिक्षण शिविर लाडनूँ में आयोजित होना तय हुआ, परंतु कर्फ्यू के कारण यह आयोजित नहीं हो सका।

तेरापंथ अमृत संसद में निर्णय

आचार्य श्री तुलसी के शासन-काल की अनेक विशिष्ट उपलब्धियों में एक है—तेरापंथ अमृत संसद। वैचारिक अभिव्यक्ति, वैचारिक आदान-प्रदान, वैचारिक मंथन एवं वैचारिक समीक्षा के पश्चात् नवनीत की भांति निसृत इसके निर्णय बहुत महत्त्वपूर्ण होते थे। संसद द्वारा लिए गए निर्णयों की क्रियान्विति हुई या नहीं हुई, क्रियान्विति नहीं हो पाई तो वह क्यों नहीं, इसके कारणों पर अनेक कोणों से लंबी बहस इसमें होती थी। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होनी चाहिए कि तेरापंथ अमृत संसद द्वारा स्वीकृत काफी निर्णय समाज व संगठन के लिए आज भी आदर्श बने हुए हैं।

15-16 अगस्त 1991, तेरापंथ अमृत संसद का पाँचवाँ अधिवेशन, लाडनूं में जैन विश्व भारती स्थित सुधर्मा सभा का प्रांगण, पूज्य आचार्य श्री तुलसी, युवाचार्यश्री महाप्रज्ञ की पावन सन्निधि। अमृत संसद के संयोजक श्री धरमचन्द चौपड़ा ने अपनी नपी-तुली व संतुलित भाषा में पाँचवें अधिवेशन की कार्य-योजना में सन्निहित चौदह बिंदुओं पर प्रकाश डाला। दो दिनों के अधिवेशन में छह संगोष्ठियाँ आयोजित हुईं। दूसरी संगोष्ठी में पाँचवें बिंदु के रूप में 'संस्कार-निर्माण' पर व्यापक बहस हुई। चर्चा का सार इस प्रकार था—''पाश्चात्य संस्कृति की चकाचौंध, टी.वी. संस्कृति और भौतिकवाद के बढ़ते आकर्षण से समाज की नई पीढ़ी के संस्कारों को सुरक्षित रख पाना प्रतिदिन कठिन-से-कठिनतर होता जा रहा है। तत्त्वज्ञान की दृष्टि से भी समाज का युवा-वर्ग प्राय: अनभिक्ष-सा हो गया है।'' सांसदों ने ऐसी स्थिति में गहरी चिंता व्यक्त की। अंतत: यह निर्णय लिया गया—''जैन तत्त्वों का प्रारंभिक ज्ञान देने एवं बचपन से ही सद्संस्कार भरने के लिए देश-भर में ज्ञानशालाएँ प्रारंभ की जाएँ। स्थानीय सभाएँ, तेरापंथ युवक परिषदें एवं तेरापंथ महिला मण्डल ज्ञानशालाओं का संचालन करे। जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा इन संस्थाओं को प्रेरित करे और ज्ञानशाला में शिक्षण-प्रशिक्षण का एक समान प्रारूप बनाकर सब जगह प्रेषित करे।''

महासभा ने संभाला उत्तरदायित्व

तेरापंथ अमृत संसद द्वारा ज्ञानशाला का समग्र उत्तरदायित्व महासभा को सौंपे जाने के परिप्रेक्ष्य में महासभा कार्यकारिणी की 12 अप्रैल 1992 को अभ्युदय भवन-जैन विश्व भारती, लाडनूँ में श्री कन्हैयालाल छाजेड़ की अध्यक्षता में संपन्न मीटिंग में ज्ञानशाला के बारे में विस्तार से चर्चा हुई और यह निर्णय हुआ कि एकरूपता की दृष्टि से बच्चों को संस्कारित करने एवं संचालन-नियोजन की दृष्टि से ज्ञानशाला का प्रारूप बनाया जाए। इस कार्य में स्थानीय सभाओं, महिला मण्डलों एवं युवक परिषदों का पूरा उपयोग किया जाए। ज्ञानशाला के विस्तार व उसे व्यवस्थित करने हेतु ज्ञानशाला प्रशिक्षक शिविर के आयोजन का भी निर्णय लिया गया। 25 जुलाई 1992 की कार्यसमिति की मीटिंग में महासभा ने पहली बार अपने बजट में ज्ञानशाला हेतु पन्द्रह हजार रुपये खर्च हेतु पारित किए। बाद में अपेक्षानुसार बजट में वृद्धि होती गई। ज्ञानशाला के संदर्भ में महासभा सदैव सजग रही, यह कहा जा सकता है।

श्री पदमचंद पटावरी को गुरुदेव तुलसी से ज्ञानशाला का प्रारूप बनाने की दृष्टि मिल चुकी थी। इधर महासभा के पास यह उत्तरदायित्व आने के बाद उसने भी यह जिम्मा अपने उपाध्यक्ष श्री पटावरी को दिया। उन्होंने संबद्ध व्यक्तियों से चिंतन-मंथन कर तत्परता से कार्य निष्पादन किया। केन्द्र की स्वीकृति मिली। सन् 1992 में ही पूर्व में प्रकाशित चार पृष्ठीय प्रारूप को सोलह पृष्ठीय बनाया गया और वह प्रकाशित हुआ। इसे उस समय सभी मान्य 363 सभाओं को प्रेषित किया गया। महासभा के प्राप्त आँकड़ों के अनुसार इस वर्ष 80 क्षेत्रों में प्रारूप के अनुसार ज्ञानशालाएँ चलीं।

आचार्य तुलसी की अनन्य कृपा

प्रथम बार सन् 1992 में प्रकाशित ज्ञानशाला प्रारूप के लिए प्रदत्त संदेश में आचार्य श्री तुलसी का मंतव्य रहा—

''भावी पीढ़ी को धार्मिक संस्कार देने का सबसे अच्छा उपक्रम है ज्ञानशाला का संचालन। कई जगह ज्ञानशालाओं का संचालन हो रहा है, पर इसका व्यवस्थित रूप नहीं हो पाया है और सब जगह एकरूपता नहीं है, इसलिए महासभा ने इस काम को अपने हाथ में लिया है। इसका एक प्रारूप बनाया है। इसका लक्ष्य यह है कि पूरे समाज में अधिक-से-अधिक ज्ञानशालाएँ चलें और उनकी एकरूपता हो जाए। उनकी विधियाँ, उनका पाठ्यक्रम भी व्यवस्थित हो जाए। सर्वत्र लोग इससे प्रेरणा पायेंगे और अपने-अपने क्षेत्रों में ज्ञानशाला का शृंखलाबद्ध रूप बनायेंगे।'' गुरुदेव के मन में ज्ञानशाला के विकास एवं विस्तार का गहरा चिंतन रहा। वे एक युगद्रष्टा युगपुरुष थे। उनके हृदय में बाल-पीढ़ी के प्रति कितनी करुणा व कृपा रही। वे चाहते थे कि बालक-बालिकाओं में संस्कारों की पौध विकसित हो, इस हेतु योजनाबद्ध ढंग से कुछ कार्य किए जाएँ। आचार्य श्री तुलसी धर्मसंघ के संगठनों एवं कार्यकर्त्ताओं को विशेष दायित्वशील एवं सक्रिय देखना चाहते थे जिससे वे अपनी क्षमताओं को उजागर करें ताकि संस्कार-निर्माण के इस उपक्रम को प्रतिष्ठित किया जा सके।

गुरुदेव ने सौंपा महाश्रमण को दायित्व

तेरापंथ अमृत संसद से महासभा को उत्तरदायित्व मिलने के बाद संस्था ने सन् 1992 में अतिशीघ्रता के साथ सोलह पृष्ठीय 'ज्ञानशाला प्रारूप' प्रकाशित किया। प्रकाशन से पूर्व इसकी फाइल लेकर श्री पदमचन्द पटावरी गुरुदेव तुलसी के पास आए और उसे श्रीचरणों में भेंट किया। तत्काल गुरुदेव ने महाश्रमण मुनि, मुनि मुदित कुमारजी (आचार्य महाश्रमण) को याद किया। महाश्रमणजी गुरु-चरणों में उपस्थित हुए। प्रसन्नमना गुरुदेव ने कहा—''देखो, पदमजी यह प्रारूप बनाकर लाए हैं। आज मुझे पूरा संतोष है। मैं जिस रूप में इसकी रूपरेखा चाहता था, वह तैयार हो गई है। अच्छी मेहनत हुई है, अब तुम्हें इस कार्य को देखना है और आगे बढ़ाना है।''

गुरुदेव की सलाह, कार्य की उपयोगिता एवं महाश्रमणजी की अपनी भावना, यह सब ज्ञानशाला मिशन के लिए शुभ भविष्य का सूचक बन गया।

आचार्य महाश्रमण का नीति-निर्देश

आचार्य महाश्रमण का तब से ज्ञानशाला प्रोजेक्ट को पूरा आशीर्वाद प्राप्त है। इसके लिए उनका सतत दिशा-निर्देश मिलता रहता है। उनका नीति-निर्देश ही ज्ञानशाला का मुख्य आधार है। इस संदर्भ में वे कई बार कहते हैं—''बालक-बालिकाएँ समाज की संपत्ति हैं। उसका सम्यग् उपयोग करने के लिए आवश्यक है कि उनमें सम्यग् ज्ञान व सम्यग् आचार के संस्कार भरे जाएँ। उसके अनेक उपक्रम हो सकते हैं, उनमें एक है ज्ञानशाला। ज्ञानशाला संस्कार निर्माण की प्रयोगशाला है। गणाधिपति पूज्य गुरुदेव की सन्निधि में इस संदर्भ में चिंतन चला। आचार्य महाप्रज्ञ से संबोध प्राप्त किया। मैंने भी ध्यान देना शुरू किया। बाल पीढ़ी यदि संस्कारी नहीं होगी तो युवा पीढ़ी के संस्कार-संपन्न होने की बात कैसे संभव हो सकती है? बच्चों को गलत संस्कारों से बचाना अपेक्षित है। प्रत्याक्रमण हेतु जैसे शस्त्रों की जरूरत रहती है, वैसे ही गलत संस्कारों को मिटाने के लिए ज्ञानशाला एक शस्त्र है। ज्ञानशाला के माध्यम से संस्कारों का कवच मजबूत होगा।

आचार्य महाप्रज्ञ का आशीर्वाद

आचार्य महाप्रज्ञ संस्कार-निर्माण की दृष्टि से ज्ञानशाला को शक्तिशाली उपक्रम मानते थे। प्रवचन में जब सामने ज्ञानशाला के बच्चों को देखते, तो कई बार कहते—''ज्ञानशाला एक शक्तिशाली उपक्रम है। ज्ञानशाला सुंदर शब्द है। विद्यालयों में बौद्धिक विकास की कला मुख्यत: सिखाई जाती है। धर्म के क्षेत्र में ज्ञानशालाएँ चलती हैं। वहाँ बच्चों को तत्त्वज्ञान के साथ संस्कार दिए जाते हैं। ज्ञानशाला के माध्यम से बच्चों में चरित्र एवं सदाचार के संस्कार पुष्ट हों।'' आचार्य महाप्रज्ञ यह भी फरमाते—''संस्कारी युवा देश और समाज की शान होते हैं। इसके लिए सर्वाधिक उत्तम स्थान है—ज्ञानशाला। ज्ञानशाला से संस्कारी किशोर तैयार होंगे और संस्कारी किशोरों से संस्कारी युवक। संस्कारी युवाओं से ही संस्कारी समाज की स्थापना संभव है जो कि देश का उज्ज्वल भविष्य है।''

ज्ञानशाला क्यों (उद्देश्य)

- सुसंस्कारी भावी पीढ़ी को तैयार करना।
- बच्चों में सहिष्णुता एवं विनम्रता के संस्कारों को विकसित करना।
- बच्चों को चरित्रशील बनाना।
- बच्चों को स्वस्थ, संयमित एवं आध्यात्मिक जीवन जीने का अभ्यास करवाना।
- जैन दर्शन का ज्ञान एवं प्रेक्षाध्यान का अभ्यास करवाना।

ज्ञानशाला की एकरूपता

'ज्ञानशाला' शब्द का प्रयोग लंबे अर्से से कहीं-कहीं चल रहा था तो कहीं 'पाठशाला' शब्द भी प्रयुक्त हो रहा था। ज्ञानशाला शब्द से पहले अलग-अलग नाम भी लगते थे, जैसे—गौतम ज्ञानशाला, महावीर ज्ञानशाला, भिक्षु ज्ञानशाला, तुलसी ज्ञानशाला, तेरापंथ ज्ञानशाला आदि। एकरूपता एवं प्रभावशीलता के साथ ज्ञानशाला एक निश्चित प्रारूप के आधार पर चले, इस लक्ष्य को लेकर यह निर्णीत हुआ कि मात्र

'ज्ञानशाला' शब्द ही नाम के रूप में प्रयुक्त किया जाए। इसके पहले कुछ भी शब्द प्रयुक्त न किया जाए।

मान्य ज्ञानशाला का आधार

ज्ञानशालाओं का संचालन प्रतिदिन हो, यह महत्त्व की बात है। प्रारूप के अन्य नियमों का पालन करते हुए अग्रलिखित ज्ञानशाला का गठन कर संचालन करने पर मान्य ज्ञानशाला की परिधि में आ सकेंगे।

1. प्रतिदिन चलने वाली ज्ञानशाला – वर्ष भर में कम से कम 80 कक्षाएँ अवश्य लगें।
2. साप्ताहिक ज्ञानशाला – वर्ष भर में न्यूनतम 40 कक्षाएँ।
3. चातुर्मासिक ज्ञानशाला – कम से कम 30 कक्षाएँ चातुर्मास में तथा अवशिष्ट 10 कक्षाएँ साप्ताहिक चलें।

ज्ञानशाला संचालन का मापक आधार इस तरह रहता है—

1. 'ज्ञानशाला प्रारूप' के अनुरूप ज्ञानशाला का संचालन।
2. केन्द्रीय नीति-निर्देश की अनुपालना व कार्य-संपादन।
3. परीक्षा व ज्ञानार्थी परीक्षाओं का आयोजन।
4. ज्ञानशाला संचालन की गुणवत्ता, औसत ज्ञानार्थी/प्रशिक्षक संख्या, निरंतरता आदि।
5. क्षेत्र में श्रद्धा के परिवारों (खुले) की संख्या व ज्ञानार्थियों की संख्या का औसत अनुपात।

ज्ञानशाला का विधिवत गठन व मान्यता प्राप्त होने के बाद नीति-नियमों के अनुसार सुव्यवस्थित संचालन करना। साप्ताहिक ज्ञानशाला का घोषित समय दो घंटे है जिसका मिनट-टू-मिनट प्रोग्राम बना हुआ है।

ज्ञानशाला को हर दृष्टि से सँवारा जाए और मजबूत बनाया जाए। बच्चों को प्रेरणा दी जाए और अभिभावकों से इस संबंध में निवेदन किया जाए। इसके लिए 'संपर्क पखवाड़ा' हर वर्ष आयोजित होता है। इसके साथ वार्षिकोत्सव भी अभिप्रेरक होता है।

ज्ञानशाला प्रशिक्षक प्रशिक्षण

ज्ञानशालाओं के सुव्यवस्थित संचालन हेतु कुशल प्रशिक्षकों की जरूरत रहती है। सकारात्मक परिणाम प्राप्त करने तथा ज्ञानशाला की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए प्रशिक्षित प्रशिक्षक अपेक्षित रहते हैं। इसके लिए ज्ञानशाला प्रशिक्षक प्रशिक्षण परियोजना प्रस्तुत की गई।

ज्ञानशाला प्रशिक्षकों की तीन श्रेणियाँ हैं—

1. ज्ञानशाला-विज्ञ
2. ज्ञानशाला-विशारद
3. ज्ञानशाला-स्नातक

- निर्धारित पाठ्यक्रम के साथ तीनों श्रेणियों के प्रशिक्षण की अवधि एक-एक वर्ष की होती है।
- तीनों श्रेणियों में लिखित व शिविर परीक्षा होती है। दोनों ही विद्याओं में 40-40 प्रतिशत अंक व कुल 50 प्रतिशत अंक प्राप्त होने पर ही प्रशिक्षक का प्रमाण-पत्र दिया जाता है।
- पहले से निर्धारित केन्द्रों पर ही दोनों तरह की परीक्षाएँ आयोजित होती हैं।
- निश्चित दिनांक तथा समय पर प्रतिवर्ष लिखित परीक्षा होती है।
- शिविर परीक्षा के अंतर्गत प्रत्येक श्रेणी में त्रिदिवसीय शिविर में संभागी बनकर प्रायोगिक व मौखिक परीक्षा देनी होती है।
- प्रशिक्षक प्रशिक्षण का क्रम सन् 2002 में प्रारंभ हुआ।
- क्षेत्रों में लिखित परीक्षा के केन्द्र स्थापित हो चुके हैं।
- क्षेत्रों में त्रिदिवसीय शिविर आयोजित हो चुके हैं।

ज्ञानशाला ज्ञानार्थी प्रशिक्षण एवं परीक्षा

ज्ञानशाला में ज्ञानार्थी बालक-बालिकाओं को उपयोगी प्रशिक्षण दिया जाता रहा है। सुविधा के लिए बालोपयोगी प्रारंभिक धार्मिक शिक्षण हेतु छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ प्रकाशित होती रही हैं। सन् 2004-05 में विधिवत् रूप से महासभा-ज्ञानशाला प्रकोष्ठ के द्वारा 'शिशु संस्कार बोध' (भाग 1 से 5) का पंचवर्षीय पाठ्यक्रम निर्धारित हुआ और प्रकाशित हुआ। इन पुस्तकों से धर्म का प्रारंभिक ज्ञान व अन्य प्रेक्षाध्यान आदि विषयों पर प्रश्नोतर व प्रयोग हिन्दी व अंग्रेजी दोनों भाषाओं में गुंफित हैं।

ज्ञानशाला में ज्ञानार्जन कर रहे ज्ञानार्थियों की स्थानीय स्तर पर प्रतिवर्ष परीक्षा का आयोजन सभी ज्ञानशालाओं में होना चाहिए। इसके लिए परीक्षा का स्वरूप प्रस्तुत किया गया।

- ज्ञानार्थी परीक्षा का आधार शिशु संस्कार बोध भाग 1 से 5 रखा गया।
- परीक्षाएँ मौखिक स्वरूप में ज्ञानशाला प्रकोष्ठ द्वारा प्रेषित प्रश्नपत्र के आधार पर ली जाती हैं।
- यह परीक्षा प्रतिवर्ष निर्धारित दिनांक व समय पर एक साथ होती है।
- मौखिक परीक्षा में मुख्यत: कंठस्थ तथा उच्चारण पर विशेष ध्यान दिया जाता है।
- प्रत्येक ज्ञानशाला में ज्ञानार्थी परीक्षा का आयोजन अनिवार्य है।
- ज्ञानार्थी परीक्षा का आयोजन सन् 2009 में प्रारंभ हुआ।

ज्ञानशाला

सफर 25 वर्ष का

बच्चा स्वयं अपनी स्कूली शिक्षा व प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण में दबता गया। पाश्चात्य संस्कृति व भौतिकतावाद के बढ़ते आकर्षण से समाज की बाल-पीढ़ी के संस्कारों को सुरक्षित रखना कठिन से कठिनतर होता गया। ऐसे में ज्ञानशालाओं के माध्यम से संस्कार निर्माण व जैन तत्त्वज्ञान के अध्यापन का महत्त्व बढ़ गया....

सी.ए. सोहनराज चोपड़ा

पुराने समय में संयुक्त परिवार हुआ करता था एवं लोगों के पास पर्याप्त समय भी हुआ करता था। बच्चों में संस्कार निर्माण का कार्य माता-पिता, दादा-दादी आदि बड़े बुजुर्गों के द्वारा घर में सहज रूप में हो जाता था। कालांतर में व्यवसाय की दृष्टि से गाँवों से शहरों की ओर पलायन बढ़ गया। संयुक्त परिवार की जगह एकल परिवार होने लगे। परिवार के मुखिया पर व्यवसाय आदि के कार्यों का बोझ बढ़ता गया। माताओं पर घर का कार्य एवं बहू-बेटियों को अपनी शिक्षा व नौकरी के कारण बच्चों के लिए समय निकालना कठिन होने लगा। बच्चा स्वयं अपनी स्कूली शिक्षा व प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण में दबता गया। पाश्चात्य संस्कृति व भौतिकतावाद के बढ़ते आकर्षण से समाज की बाल-पीढ़ी के संस्कारों को सुरक्षित रखना कठिन से कठिनतर होता गया। ऐसे में ज्ञानशालाओं के माध्यम से संस्कार निर्माण व जैन तत्त्वज्ञान के अध्यापन का महत्त्व बढ़ गया।

तेरापंथ धर्मसंघ के नवम् अधिशास्ता आचार्य श्री तुलसी दूरदर्शी एवं स्वप्नदर्शी धर्मगुरु थे। उन्होंने इन परिस्थितियों को देखते हुए सन् 1991 में समाज के बच्चों के संस्कार निर्माण के लिए आह्वान किया। इस संदर्भ में तेरापंथ अमृत संसद के अधिवेशन में (15-8-1991) गहरी चिंता व्यक्त की गई व निर्णय लिया गया कि संस्कारों के बीज-वपन व जैन तत्त्वों का प्रारंभिक ज्ञान कराने हेतु ज्ञानशालाएँ प्रारंभ की जाएँ। इसका

गुरुत्तर दायित्व जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा को सौंपा गया।

12-4-1992 को 'अभ्युदय', जैन विश्व भारती में आयोजित महासभा की कार्यसमिति की मीटिंग में ज्ञानशाला पर चर्चा हुई व उस परिप्रेक्ष्य में एक प्रारूप बनाने का निर्णय हुआ। 25-7-1992 को ज्ञानशाला के लिए पहली बार केन्द्रीय बजट बना। इस वर्ष में ही चार पृष्ठों का ''ज्ञानशाला : एक प्रारूप'' बनाकर सभाओं को भेजा गया। उस समय लगभग 80 ज्ञानशालाओं का संचालन होता था। 1993 में ज्ञानशालाओं की संख्या बढ़कर 125 हुई व इसी वर्ष ज्ञानशालाओं को प्रोत्साहन देने हेतु पुरस्कारों का क्रम शुरू हुआ। सर्वोत्तम ज्ञानशाला को चल विजयोपहार देने का निर्णय हुआ।

ज्ञानशाला उपक्रम के प्रथम प्रभारी श्री पदमचंदजी पटावरी थे, जिन्होंने निरंतर पत्रों, परिपत्रों व यात्राओं के माध्यम से ज्ञानशालाओं को प्रारंभ करने का एक सुनियोजित अहर्निश प्रयास किया। उस समय प्रशिक्षकों को प्रशिक्षण देने हेतु आठ दिवसीय शिविर ज्यादातर केन्द्र में ही लगाने का क्रम था। वर्ष 1996 तक ज्ञानशालाओं की संख्या 150 तक पहुँची व 'ज्ञानशाला : एक प्रारूप' का संशोधन के साथ पुनः प्रकाशन हुआ।

वर्ष 1998 में महासभा द्वारा श्री हिम्मतमलजी परमार (सूरत) को ज्ञानशाला प्रभारी मनोनीत किया गया एवं राष्ट्रीय संयोजक के रूप में श्री सोहनराज चोपड़ा (सी.ए., अहमदाबाद) नियुक्त किए गये। इस वर्ष से ही आंचलिक प्रशिक्षक प्रशिक्षण शिविरों का क्रम शुरू हुआ। वर्ष 2000 में श्री हिम्मतमलजी परमार दिवंगत हो गये। ज्ञानशाला के नए संयोजक के रूप में श्री सोहनराज चोपड़ा एवं नियोजक के रूप में युवक-रत्न श्री अशोक भाई संघवी (बाव, गुजरात) की नियुक्ति की गई।

वर्ष 2001 में ज्ञानशाला के उपक्रम को और अधिक गति प्रदान करने हेतु ज्ञानशाला प्रभारी संतों की नियुक्तियाँ हुईं। मुनिश्री सुमेरमलजी लाडनूँ व मुनिश्री उदितकुमारजी की क्रमशः ज्ञानशाला प्रभारी व सहप्रभारी के रूप में नियुक्ति हुई। नया 'ज्ञानशाला : एक प्रारूप' का प्रकाशन हुआ। मुनिश्री की यात्राओं के साथ ही ज्ञानशाला के लिए नए क्षितिज खुले। अच्छे प्रशिक्षण के लिए अच्छे प्रशिक्षित प्रशिक्षकों का होना अति-आवश्यक है। इसी उद्देश्य को लेकर वर्ष 2002 में त्रिवर्षीय प्रशिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम की योजना को लागू किया गया। इसके अन्तर्गत विज्ञ, विशारद व स्नातक श्रेणी की लिखित परीक्षा एवं इसके पश्चात् त्रिदिवसीय शिविर के माध्यम से प्रशिक्षण प्रदान करने का जो क्रम शुरू किया गया, वह अभी तक चल रहा है और इस योजना के अन्तर्गत बड़ी संख्या में प्रशिक्षक तैयार होते गये। फलश्रुति के रूप में आज हमारे सामने बहुत बड़ी संख्या में प्रशिक्षकों की उपलब्धता देखी जा सकती है।

महासभा के द्वारा वर्ष 2005 में 'शिशु संस्कार बोध' भाग 1 से 5 का हिन्दी व अंग्रेजी भाषा में प्रकाशन किया गया। इन पुस्तकों का लम्बे समय तक अच्छा उपयोग हुआ। वर्ष 2009 से 'शिशु संस्कार बोध,' 1 से 5 भाग के लिए मौखिक परीक्षाओं का आयोजन शुभारंभ हुआ। इसमें प्रतिवर्ष औसतन 7000 बच्चे भाग लेते हैं। कार्य की सुगमता की दृष्टि से देश भर के विभिन्न अंचलों के आंचलिक संयोजक की नियुक्ति कर उन्हें कार्य का दायित्व दिया जाता है। वर्ष 2005 तक प्रारूप के अनुसार संचालित ज्ञानशालाओं की संख्या 200 तक पहुँची व उसमें अध्ययनरत ज्ञानार्थियों की संख्या 10,530 थी। सेवारत प्रशिक्षक 1010 थे।

वर्ष 2016 में ज्ञानशालाओं की संख्या 470, ज्ञानार्थियों की संख्या 17,872, सेवारत प्रशिक्षकों की संख्या 3089 हो गई। देशभर में ज्ञानशालाओं का एक अच्छा नेटवर्क बना।

प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण में सेवाव्रती राष्ट्रीय ज्ञानशाला प्रशिक्षक श्री निर्मलजी नौलखा व कुछ समय पश्चात् श्री डालमचन्दजी नौलखा ने ज्ञानशाला प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण का दायित्व सँभाला। इनकी सेवाओं का क्रम निंरतर जारी है।

समय के साथ-साथ मूल को सुरक्षित रखते हुए ज्ञानशालाओं का स्वरूप बदला, प्रशिक्षण का लम्बा क्रम चला, ज्ञानार्थी के लिए अध्यापन शैली एवं संसाधन बदलते गये। एकरूपता की दृष्टि से ज्ञानार्थी गणवेश, बैज, दुपट्टे, ज्ञानशाला किट, ज्ञानशाला प्रशिक्षक पाठ्यक्रम, ज्ञानार्थी पाठ्यपुस्तकों आदि का समय-समय पर निर्धारण किया गया।

ज्ञानशाला उपक्रम पर तेरापंथ धर्मसंघ के सभी आचार्यों की विशेष अनुकम्पा रही। वर्तमान में परम पूज्य श्रद्धेय आचार्यश्री महाश्रमणजी की ज्ञानशाला पर विशेष दृष्टि है। आपने अपने युवाचार्य काल से ही ज्ञानशाला उपक्रम पर ध्यान देना शुरू कर दिया था। आपश्री के मुखारविन्द से समय-समय पर दिशा-निर्देश मिलते रहते हैं। महासभा ने भी इस उपक्रम हेतु पूरा सहयोग प्रदान किया। मेरा यह सौभाग्य है कि मुझे गणाधिपति तुलसी के समय इस उपक्रम से जुड़ने का अवसर मिला। आचार्यों की अनुकम्पा से लगभग 19 वर्षों से मैं इस उपक्रम में कार्यरत हूँ। इस उपक्रम से जुड़े अनगिनत कार्यकर्त्ताओं, आंचलिक संयोजकों, आंचलिक सह-संयोजकों, परीक्षा व्यवस्थापकों व स्थानीय सभा संस्थाओं व कार्यकर्त्ताओं के उत्साहपूर्ण सहयोग से ही यह उपक्रम आज इस स्तर पर पहुँच पाया है।

ज्ञान-शिखर चढ़ेंगे

यशा नाहर

शाला है हमारी
लब्धि की फुलवारी
इसमें जो पढ़ते बच्चे
हो जाते संस्कारी।

❖

श्रावक हम बनेंगे
नैतिक भी बनेंगे,
ज्ञानशाला में पढ़कर
ज्ञान-शिखर चढ़ेंगे।

❖

वन टू टेन

प्रथम बाफना

वन वन वन : जीवन बनाओ ए-वन
टू टू टू : धर्म को छू
थ्री थ्री थ्री : घर से हो जाओ फ्री
फोर फोर फोर : मत बनो चोर
फाइव फाइव फाइव : अच्छी बनाओ लाइफ
सिक्स सिक्स सिक्स : धर्म का टाइम फिक्स
सेवन सेवन सेवन : पापों का कर हनन
एट एट एट : खोल मोक्ष के गेट
नाइन नाइन नाइन : गुरुदेव हमारे सुपर फाइन
टेन टेन टेन : बनो बनो पक्के जैन।

ज्ञान दीप सदा जलाओ

लक्ष्य नाहर

ज्ञान के दीप सदा जलाओ
नन्हे मुन्ने, प्यारे बच्चो,
मन-मन्दिर में उसे सजाओ,
ज्ञानशाला के प्यारे बच्चो!

आशाओं का तेल डालना
संकल्पों की बाती रखना,
स्नेह-दीप तुम सदा जलाना
ज्ञानशाला के प्यारे बच्चो!

मानवता की ज्योति जलाओ
आँधी आए, ना घबराओ
चलो कदम से कदम मिलाकर,
ज्ञानशाला के प्यारे बच्चो!

भेद-भाव रखना न किसी से
मिलना तुम सबसे हँस-हँस के,
मैत्री प्रेम की बेल लगाना
ज्ञानशाला के प्यारे बच्चो!

जीवन में होगा उजास

यश्वी जयेश मेहता

धर्मसंघ को जिस पर नाज है, वह उपक्रम ज्ञानशाला है,
छोटे-छोटे सच्चे मोतियों की, यह अटूट माला है।
इनकी सहजता-सरलता को देखकर लगता है,
होनहार वीरों को तैयार करने की, यह तो प्रयोगशाला है।।

ज्ञानशाला के ज्ञानार्थियों तुमने, नव उत्साह जगाया है,
आलस्य-प्रमाद सम शत्रु को, तुमने दूर भगाया है।
करते हैं हम अभिनन्दन, देते सौ-सौ बधाई,
ज्ञानशाला में प्रवेश पाकर, नया सूरज उगाया है।।

ज्ञानशाला में ज्ञान पाकर, हम करेंगे आत्मविकास,
मिट जाएगा तमस सारा, जीवन में होगा उजास।
कह रहे हैं सभी ज्ञानार्थी, गुरुवर ऐसा दें आशीष,
जीवन धन्य हो जाए हमारा, पाएँ परम प्रकाश।।

ज्ञानशाला वह कहलाए

हित डागलिया

ज्ञान की सच्ची राह दिखाए,
ज्ञानशाला वह कहलाए।
जो हर रोज यहाँ पर आए,
जीवन में उन्नति पाए।।

अच्छी-अच्छी सीख सिखाए,
झूठ-कपट से सदा बचाए।
आदर्शों का पाठ पढ़ाए,
ज्ञानशाला वह कहलाए।

हम ज्ञानार्थी बनकर आएँ,
आस्था से इसको अपनाएँ।
मन में ज्ञान का दीप जलाएँ,
ज्ञानशाला वह कहलाए।।

जीवन संस्कार

दियान बाफना

संस्कारों के अभाव में विकार आते हैं
संगत में सद्-असद् विचार आते हैं,
बालक तो कच्ची माटी है कुम्हार की,
जैसे ढालेंगे वैसे ही आकार पाते हैं।।

ज्ञानशाला में बच्चों को छोटी-छोटी बातों पर ध्यान दिलाया जाता है।

- घर पर सभी बड़ों को पैर छूकर जय जिनेन्द्र कहना
- घर में ऊँची आवाज से नहीं बोलना
- सबको एक समान समझना
- गरीबों की सहायता करना
- नमस्कार महामंत्र का स्मरण करना आदि यही संस्कार हैं।
- इससे बच्चों में अच्छे गुणों का समावेश होता है।
- वह अपनी संस्कृति व परिवार से जुड़ा रहता है।
- अच्छे संस्कार जीवन को उचित दिशा देते हैं।

बाल संस्कार

संजय कुमार बोथरा

आधुनिकता के इस दौर में,
जीवन दौड़ रहा तेज रफ्तार।
क्या जरूरी नहीं इस युग में,
नई पीढ़ी के लिए बाल संस्कार?

छोटे-बड़े सभी, ऑनलाइन के,
बन चुके हैं अनजाने शिकार।
इन्टरनेट ने जमा रखा है,
हर मिनट पर अपना अधिकार

कैसे मिलें अच्छी आदतें,
बच्चे कैसे पाएँ सद्व्यवहार?
कैसे रहे परिवार मजबूत, और
न दरके कैसे रिश्तों का आधार?

सिर्फ धन सम्पत्ति और व्यापार,
से नहीं चलेगा हमारा संसार,
रहेंगी उपलब्धियाँ आधी-अधूरी,
अगर न दे पाए बाल संस्कार

बीते वो दिन जब खेलते थे,
गुल्ली-डंडा गलियों में बाहर।
अब तो सभी खेल बंद हैं,
मोबाइल स्क्रीन के अन्दर।

रिश्तों से रह गए अनजान,
समाज से भी नहीं कोई काम।
लगता है आ गए हैं दूर बहुत,
पता नहीं पहुँचे कौन से मुकाम?

मन को मिलती है कितनी खुशी
जब बच्चे पूछते हमारी खबर।
लेकिन तरस जाते हैं जब होते हैं
बच्चे अपनी ही दुनिया में बेखबर।

स्वयं ने किया अपने माँ-बाप का,
उनकी बढ़ती उम्र में तिरस्कार।
क्यों रखें बच्चों से कोई उम्मीद,
जब मिले नहीं उन्हें अच्छे संस्कार।

कुछ समय बिताएँ बच्चों संग,
देखें उनकी आँखों से यह संसार।
खेलें उनके संग, रूठें झगड़ें कभी,
और मना लें करके उनको मनुहार।

क्रोध से रखें मुक्त स्वयं को,
न दौड़ भाग करें बिना विचार।
धन का करें अच्छा विसर्जन,
ईश्वर का मानें हरदम उपकार।

समय दें धर्म संघ की सेवा में,
अहोभाग्य! तेरापंथ का सहकार।
बच्चे जानें गौरवशाली इतिहास,
पाएँ अच्छे, सुन्दर बाल-संस्कार।

विचारक्रांति नहीं, व्यक्तिक्रांति चाहिए

डॉ. शान्ता जैन

जीवन-निर्माण की शुरुआत कहाँ से करें? एक उभरता सवाल जुड़ा है आज के परिवेश में। बचपन, यौवन और बुढ़ापा सभी की जीवनशैली आज इस बात की शिकायत कर रही है कि संस्कारों की जमीं बहुत कमजोर है। न निर्माण की सही प्रक्रिया है और न निर्माण के प्रति व्यक्ति के भीतर सच्ची निष्ठा। ऐसी स्थिति में संस्कारों का दायित्व-बोध कैसे अपने मुकाम तक पहुँचे?

आज सर्वेक्षण करें तो यह तथ्य उभरकर सामने आएगा कि संस्कारों की पौध सुन्दर फुलवारी नहीं बन पा रही है। सीख हमारी सीख नहीं बन पा रही है। सोच और समझ के दायरे बदल गये हैं। आदर्श, सिद्धान्त और शैली के प्रति बनी हुई मान्यताओं ने नए मानक बना लिये हैं। सुविधावाद ने दृष्टि और दर्शन दोनों बदल डाले हैं। उपयोगिता और आवश्यकता से ज्यादा आकांक्षा को मूल्य मिलने लगा है। इसलिए धर्म का प्रभाव भी कमजोर पड़ने लगा है। यूँ लगता है हमारे दिल और दिमाग पर हर दिन किसी-न-किसी अपसंस्कार और अपसंस्कृति का साया पड़ता है। इसलिए माँ-बाप द्वारा सद्संस्कारों के संपोषण के नाम पर दिया जाने वाला शिक्षण-प्रशिक्षण परिणामी नहीं बन पा रहा है।

इसका सबूत है समाज में आधुनिकता के नाम पर पल रही अनेक ऐसी बुराइयाँ जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी जीवन मूल्यों को गिरा रही हैं। समाज के पर्दे पर युवा पीढ़ी में उच्छृंखल जीवन के तौर-तरीकों के रूप में प्रस्तुति पा रहे किस्से—कभी तलाक तो कभी पलायन, कहीं विद्रोह तो कहीं हत्या, कहीं भ्रूणहत्या तो कहीं आत्महत्या, कहीं अपहरण तो कहीं बलात्कार आये दिन हम पढ़ते, सुनते और देखते हैं। यहाँ बात केवल लड़के या लड़की की नहीं है, अस्वस्थ मानसिकता की है। कुलीन घरानों में अच्छी परवरिश वाले बच्चों में युवा काल की दहलीज पर चढ़ते ही उनमें इतना दुस्साहस कहाँ से आ जाता है कि उन्हें अपने परिवार, समाज और धर्म की मान-मर्यादाओं तक का ख्याल नहीं रहता।

संस्कारों की खिसकती जमीं को देखकर प्रश्न उठता है कि यह सब कुछ माँ-बाप की लापरवाही का परिणाम है या जरूरत से ज्यादा आजादी मिल जाने का प्रतिफल?

दूसरी ओर देखें तो समाज में शादी, विवाह जैसे उत्सवों पर होने वाली फिजूलखर्ची, खान-पान का बिगड़ता स्वरूप, पैसे और प्रतिष्ठा का झूठा प्रदर्शन, ड्रिंक, डांस और ड्रग्स की संस्कृति में डूबा युवा मन, कुछ ऐसे आज के ज्वलन्त मुद्दे हैं जिन्हें सही न मानते हुए भी हम उनका प्रतिरोध करते हैं, न अंगुलीनिर्देश। न रोकने का साहस दिखाते हैं और न सुधार के लिए पहल करते हैं।

क्या यह विरोधाभास नहीं लगता कि एक ओर तो हम अपनी गौरवशाली संस्कृति के गुणगान करते अघाते नहीं और दूसरी ओर सच्चाई यह है कि संस्कार और संस्कृति की बुनियाद को बदसूरती देने वाले हम ही वे लोग हैं जिन्हें भगवान राम, बुद्ध और महावीर जैसी महान आत्माओं के संस्कारों की विरासत मिली है। महात्मा गाँधी के अहिंसात्मक प्रयोगों का प्रशिक्षण मिला है और गुरुदेव तुलसी और आचार्य महाप्रज्ञ जैसे धर्म-नेताओं का दर्शन मिला है जो जीवन में पनप रहे हर गलत संस्कार और पश्चिमी संस्कृति की प्रवाहपातिता को लक्ष्मणरेखा देने का भागीरथी प्रयत्न और पुरुषार्थ कर रहे हैं। यदि हमने अतीत को ओझल कर दिया, वर्तमान का अंकन नहीं किया और भविष्य की सुरक्षा नहीं की तो हमारी करतूतें हमारी शालीन संस्कृति को लील जायेंगी और तब दूषित संस्कृति में पलने वाली नई पीढ़ी में न राम जनमेगा, न बुद्ध और न महावीर। काश! देश के कर्णधार, समाज के मुखिया और परिवार के प्रमुख इस सच्चाई को समझ पाते।

अफसोस तो इस बात का है कि हमारी प्रवाहपातिता की मानसिकता और जीवनगत आधुनिक व्यस्तता ने हमें टाइप्ड बना दिया। जो कुछ गलत हो रहा है हमारे साथ या हमारे इर्दगिर्द, उसे अनदेखा कर बचने के सौ बहाने ढूँढ़ लेते हैं और हम यह भूल जाते हैं कि गलत संस्कारों की छोटी-सी चिनगारी भी कभी जानलेवा बारूद बन सकती है, सात पीढ़ियों तक सर्पदंश की पीड़ा दे सकती है। हमारी चुप्पी ने, स्वार्थी सोच ने, निष्क्रिय चेतना ने सामाजिक क्रांति को नपुंसक बना दिया है और हमारे बीच कई ज्वलन्त प्रश्न अनुत्तरित होकर रह गए हैं।

यद्यपि सापेक्षता से सोचें तो इस बात को नकारा भी नहीं जा सकता कि समाज में आज भी कई ऐसे लोग हैं जो जैन संस्कारों की जमीं पर अपनी विशिष्ट पहचान बनाए हुए हैं। जिनका जीवन समाज में आदर्श उदाहरण बना है। अपने दायित्व के प्रति जागरूक हैं। संस्कारों की सीमाएँ समझते हैं। मगर बदलते युग के साथ बदलती पीढ़ियों की सोच और पाश्चात्य जीवनशैली ने जो दरवाजा खोला है उससे आने वाली अनुकरणप्रियता की हवाएँ सारे माहौल को प्रदूषित कर रही हैं।

कभी-कभी लगता है कि ऐसा सब कुछ इसलिए हो रहा है कि आज की पीढ़ी को सही समय पर सही मार्गदर्शन नहीं मिलता है। वैचारिक संघर्ष कहीं समझौते की भाषा नहीं समझता। सहने का अभाव और एक-दूसरे के प्रति अविश्वास ने दो पीढ़ियों के बीच कई फासले पैदा कर दिये। अब निष्पक्षता और निर्णायकता दोनों ही कमजोर पड़ने लगी हैं। जरूरत है बुजुर्ग पीढ़ी अपने रूढ़ विचारों के साथ वार्तमानिक बदलाव के प्रति आग्रही सोच को लचीला करे। युवा पीढ़ी अपने अभिभवकों के जीये गये अनुभवों को जीवन की प्रयोगभूमि बनाये। दोनों की परस्पर समझ, सामंजस्य, सम्मान एवं सोच जीवन को नये अर्थ देगी और तभी तीसरी नई पीढ़ी के सही निर्माण का मार्ग प्रशस्त होगा।

आज विचारक्रान्ति नहीं, व्यक्तिक्रान्ति की जरूरत है। अदालत का न्याय और सरकार का कानून जिस प्रवाह को बदल नहीं पा रहा है उसे विश्वास, आस्था और संकल्प-शक्ति से बदला जा सकता है। यदि हम इरादे छोड़ कोशिश शुरू करें तो कामयाबी अवश्य मिलेगी। इसलिए हम—

आजादी चाहें मगर संयम के साथ। स्वतन्त्र चिन्तन का क्षितिज छूएँ मगर प्रतिबद्धता के साथ। अपनी क्षमताओं का मूल्यांकन करें पर सही सोच के साथ। हम सीढ़ियों को जमीन के उस हिस्से पर रखकर ऊपर चढ़ना शुरू करें जो समतल एवं सुदढ़ हो। यही सावधानी हमारी सफलता का आधार बनेगी और यही निर्माण का क्षण शुभ शकुन देगा।

आवश्यकता है भिक्षु वाणी को समझने की

निर्मल कुमार नौलखा

आचार्य भिक्षु ने एक धर्म-क्रान्ति की जिसके फलस्वरूप तेरापंथ का उदय हुआ। आखिर यह धर्म-क्रान्ति क्यों हुई? इस प्रश्न का समाधान ढूँढ़ें तो मुख्यतः दो कारण दृष्टिगोचर होते हैं—1. तत्कालीन साधु समाज में व्याप्त आचारगत शिथिलता एवं 2. वैचारिक शिथिलता। आचारगत शिथिलता छद्मस्थ अवस्था में साधुओं में कमो-बेश रूप में सामान्यतः आ गई थी। इसका अर्थ था, स्वीकृत नियमों में प्रमादवश दोष लगना अथवा महाव्रतों के पालन में जागरूकता का अभाव। लेकिन वैचारिक शिथिलता का होना साधुत्व की दृष्टि से गहरी चिंता का विषय बन जाता है। इसका अर्थ है—दोष को दोष नहीं मानना या सावद्य प्रवृत्ति में पुण्य या धर्म की स्थापना करना। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं—जिनवाणी के विरुद्ध प्ररूपणा करना।

आचार्य भिक्षु ने जो धर्मक्रांति की, वह विशुद्ध रूप से अध्यात्म या जिनवाणी पर आधारित थी। सामान्य बुद्धि का व्यक्ति धर्म की सूक्ष्मता या गहराई को समझ नहीं पाता तो कई बार उसको ऐसा लगता है कि आचार्य भिक्षु ने जो प्रतिपादन किया है, वह समाज की दृष्टि से विसंगतिपूर्ण है, लेकिन जब व्यक्ति धर्म की सूक्ष्म गहराइयों में उतरता है, तो उसे सत्य का बोध होता है और तब उसे यह लगता है कि आचार्य भिक्षु ने जो प्रतिपादन किया है, वह अध्यात्म की दृष्टि से अक्षरशः सही है।

...अगर हम आचार्य भिक्षु को समझना चाहते हैं, तो हमें सबसे पहले यह समझना होगा कि इस दुनिया में दो रास्ते हैं, एक है मोक्ष का मार्ग और दूसरा है संसार का मार्ग। मोक्ष का मार्ग आत्मशुद्धि का मार्ग है, निवृत्ति का मार्ग है। संसार का मार्ग सांसारिक जीवन को चलाने के लिए है, प्रवृत्ति प्रधान है...

अगर हम आचार्य भिक्षु को समझना चाहते हैं, तो हमें सबसे पहले यह समझना होगा कि इस दुनिया में दो रास्ते हैं, एक है मोक्ष का मार्ग और दूसरा है संसार का मार्ग। मोक्ष का मार्ग आत्मशुद्धि का मार्ग है, निवृत्ति का मार्ग है। संसार का मार्ग सांसारिक जीवन को चलाने के लिए है, प्रवृत्ति प्रधान है। संसार के मार्ग से संसार बढ़ता है। मोक्ष के मार्ग पर चलने से आत्मा की शुद्धि होती है जिसका फलित है कर्ममुक्ति। इन दोनों मार्गों को अलग-अलग समझना चाहिए, कभी भी किसी भी बिन्दु पर इन्हें मिलाने का प्रयास नहीं करना चाहिए। साधु का त्याग तीन करण और तीन योग से है। जो कार्य साधु कर नहीं सकता, उन्हें करवा भी नहीं सकता और उनका अनुमोदन भी नहीं कर सकता। गृहस्थ और साधु का धर्म एक ही है, फर्क केवल गति (द्रुत या मंद) का है।

धर्म, पाप, पुण्य आदि शब्दों का प्रयोग हर धर्म और दर्शन में प्रायः मिलता है। इनका सामान्य अर्थ एवं जैन दर्शन की दृष्टि से जो अर्थ किया गया है, उसमें कुछ अन्तर है। पाप शब्द का सामान्य अर्थ है—बुरे कार्य, घृणित कार्य अथवा समाज विरोधी कार्य। जैन धर्म की दृष्टि से पाप शब्द का अर्थ केवल बुरे कार्य ही नहीं, बल्कि इसका व्यापक अर्थ है। जैन धर्म में पाप शब्द का अर्थ वह अशुभ प्रवृत्ति है जो आत्मा को बंधन में डालती है अथवा अशुभ कर्मों के बंधन का हेतु है। अब अगला प्रश्न है कि कर्म-बन्धन के बीज क्या हैं? जैन दर्शन में इसका उत्तर मिलता है—राग और द्वेष। लड़ाई-झगड़ा, ईर्ष्या, वैर-विरोध, गाली-गलोच आदि प्रवृत्तियाँ द्वेषात्मक हैं और इन प्रवृत्तियों को सभी लोग बुरा ही मानते हैं। और कर्मबंधन का यह एक कारण है। कर्मबन्ध का दूसरा कारण है—राग। इसका सामान्य अर्थ है—भौतिक आकर्षण या लगाव। राग को इस संसार में मान्यता मिली हुई है क्योंकि यह संसार राग पर टिका हुआ है। इसलिए राग को इस दुनिया में बुरा नहीं माना जाता। संसार में भौतिक दृष्टि से जितने भी अच्छे कार्य

माने जाते हैं, उनके पीछे कहीं-न-कहीं राग जुड़ा हुआ है और सांसारिक दृष्टि से ये कार्य अच्छे होते हुए भी कर्मबंध के हेतु हैं। अत: आत्मा की शुद्धि की दृष्टि से लौकिक उपकार के कार्य अच्छे होते हुए भी कर्म-बन्धन के हेतु हैं। अत: आत्मा की शुद्धि की दृष्टि से लौकिक उपकार के कार्य साधक नहीं बनते। बस, यहाँ इस भेद-रेखा को समझना जरूरी है। लौकिक कार्यों को संसार का मार्ग समझकर करना चाहिए और लोकोत्तर कार्यों को मोक्ष का मार्ग समझकर करना चाहिए। यही सम्यक् सोच है और आचार्य भिक्षु की वाणी का सार है।

हिंसा और अहिंसा, असंयम और संयम अध्यात्म की दृष्टि से ये महत्त्वपूर्ण शब्द-युगल हैं और यह साथ-साथ चलते हैं। जहाँ असंयम है, वहाँ निश्चित रूप से हिंसा है और जहाँ संयम है, वहाँ निश्चित रूप से अहिंसा की व्याप्ति है। अत: आचार्य भिक्षु की वाणी के अनुसार असंयम का पोषण करना कभी धर्म या पुण्य का हेतु नहीं बन सकता, वह केवल लौकिक कर्त्तव्य ही हो सकता है। महाव्रती साधु के अलावा सभी जीव असंयमी ही होते हैं, केवल साधु को उसकी विधि के अनुसार सुपात्र दान देना ही संयम का पोषण हो सकता है और यह श्रावक का बारहवाँ व्रत है, मोक्ष का मार्ग है।

वस्तुत: आचार्य भिक्षु की वाणी भगवान महावीर की वाणी की ही सही व्याख्या है। आचार्य भिक्षु ने लौकिक धर्म (कर्त्तव्य) और लोकोत्तर धर्म (आत्मशुद्धि) की भेद-रेखा को स्पष्ट कर भगवान महावीर की वाणी का सार हमारे समक्ष स्पष्ट किया है। इस भेद-रेखा का बोध होना ही सम्यकत्व का आधार है, यथार्थ का बोध है। आचार्य भिक्षु ने धर्म की पहचान की कुछ कसौटियाँ बताई हैं, अगर हम इन कसौटियों पर परीक्षण कर सकें, तो मोक्ष मार्ग की पहचान कर सकते हैं। धर्म की पहचान की कुछ कसौटियाँ इस प्रकार हैं—

1. त्याग धर्म है, भोग अधर्म है।
2. अहिंसा धर्म है, हिंसा अधर्म है।
3. जिन आज्ञा धर्म है, अनाज्ञा अधर्म है।
4. हृदय परिवर्तन धर्म है, बल प्रयोग में धर्म नहीं।
5. धर्म अनमोल है, पैसों से खरीदा जाये, वो धर्म नहीं।

आचार्य भिक्षु के अनुसार छोटे जीव को मार कर बड़े जीव का पोषण करना भी लौकिक धर्म ही हो सकता है क्योंकि इसमें भी असंयम का पोषण एवं हिंसा जुड़ी हुई है। इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि आचार्य भिक्षु ने लौकिक और लोकोत्तर धर्म की भेद-रेखा को स्पष्टत: रेखांकित कर हमें आत्म-धर्म की पहचान की नई दृष्टि प्रदान की है जो कि हमारे सम्यक्त्व को पुष्ट करने में निरन्तर योगभूत बनती रहेगी। इस उपकार के लिए हम और हमारी भावी पीढ़ियाँ युग-युग तक आचार्य भिक्षु की आभारी रहेगी।

ज्ञानशाला का लक्ष्य महान

रेखा कोठारी

तेरापंथ का यह अवदान।
ज्ञानशाला का लक्ष्य महान।।

प्रेम-शांति का पाठ पढ़ाती,
सत्य-अहिंसा की राह दिखाती,
सम्यग ज्ञान सिखाती यह,
अमृत रसपान कराती यह
श्रद्धा आस्था का वरदान
ज्ञानशाला का लक्ष्य महान।।

हर दिल को यह नेक बनाती,
संस्कारों के सुमन खिलाती,
संयम भाव जगाती यह,
जीवन सफल बनाती यह।
बच्चे पाते सच्चा ज्ञान
ज्ञानशाला का लक्ष्य महान।।

ज्ञानशाला जाना है

भाग्यवती कच्छारा

तुलसी गुरुवर के सपनों का, भारत हमें बनाना है।
संस्कारों की शिक्षा पाने, ज्ञानशाला जाना है।।

सबसे प्यारी सबसे न्यारी, सद्गुणों की यह फुलवारी।
रंग-बिरंगे शिक्षा के गुल, जीवन हमें सजाना है।।
ज्ञानशाला जाना है।

हम हैं नन्हे मुन्ने बच्चे, लेकिन मन के बिलकुल सच्चे।
जीवन के कोरे कागज पर, उज्ज्वल भविष्य रचाना है।।
ज्ञानशाला जाना है।।

नहीं चाहिए टी.वी., एंड्रायड, वीडियो गेम की नहीं जरूरत,
मूवी, ड्रामा, रेस्ट्रां, होटल, अब न वक्त गँवाना है।
ज्ञानशाला जाना है।।

चलो मम्मी, चलो डैडी, जल्दी से हमें कर दो रेडी,
नैतिक इंसा बनकर हमको, जग में नाम कमाना है।
ज्ञानशाला जाना है।।

ज्ञानशाला : प्रबंधन

कुशल व नियोजित प्रबंधन से किसी प्रवृत्ति का संचालन होता है तो वह सुव्यवस्थित चलती है। ज्ञानशाला का देशव्यापी नेटवर्क है। इसका प्रबंध संचालन इस प्रकार है—

केन्द्रीय संचालन—जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा

स्थानीय संचालन—जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सभा

सहयोगी संस्थाएँ—तेरापंथ महिला मण्डल, तेरापंथ युवक परिषद्

स्थानीय स्तर पर ज्ञानशाला संचालन 'स्थानीय ज्ञानशाला समिति' के द्वारा होता है जिसमें सहयोगी संस्थाओं के नामांकित/चयनित व्यक्ति व अन्य मान्य व्यक्ति सदस्य होते हैं।

ज्ञानशाला का संचालन नेटवर्क का स्वरूप है—

महासभा—ज्ञानशाला प्रकोष्ठ

राष्ट्रीय संयोजक

राष्ट्रीय ज्ञानशाला समिति

आंचलिक संयोजक

क्षेत्रीय संयोजक

स्थानीय संयोजक

- तेरापंथी महासभा ज्ञानशाला प्रकोष्ठ के लिए राष्ट्रीय संयोजक की नियुक्ति करता है।
- ज्ञानशाला उपक्रम से संबंधित कोई भी नीति, प्रबंधन तथा अन्य निर्देशक बिन्दु के संदर्भ में अंतिम निर्णय महासभा के ज्ञानशाला प्रकोष्ठ का रहता है।
- भारत व नेपाल में ज्ञानशाला नेटवर्क के क्रम में बाईस अंचल हैं। एक-एक अंचल को अपेक्षानुसार दो या इससे अधिक क्षेत्रों में बाँटा गया है।
- ज्ञानशाला प्रकोष्ठ की वर्ष में एक बार मीटिंग होती है।
- स्थानीय स्तर पर गाँवों व कस्बों में ज्ञानशाला का संचालन तथा नगरों व महानगरों में अनेक स्थानों पर संचालन।
- एकरूपता की दृष्टि से ज्ञानशाला की सामग्री एकसमान है। इनके संचालन, उपस्थिति, वार्षिक रिपोर्ट, विवरण आदि के लिए फॉर्म बने हुए हैं।
- ज्ञानशाला प्रकोष्ठ कार्यालय का संपर्क प्रबंधन सशक्त है। कार्यालय से सभी ज्ञानशालाओं के साथ परिपत्र, पत्र व सोशल मीडिया के माध्यम से नियमित संपर्क रहता है। अपेक्षानुसार टेलीफोनिक संपर्क भी रहता है। ज्ञानशाला की अपनी वेबसाइट भी है।
- ज्ञानशाला की जानकारी हेतु आकर्षक ब्रोशर प्रकाशित है। ज्ञानशाला के संचालन, प्रबंधन व अन्य आवश्यक अवगतियों (जानकारियों) के लिए प्रकाशित 'ज्ञानशाला : एक प्रारूप' बहुत उपयोगी है।
- परम पूज्य आचार्यश्री महाश्रमण की अनुकंपा से ज्ञानशाला दिवस घोषित हुआ है। भाद्रपद मास के प्रथम रविवार को पूरे देश में यह विधिवत् आयोजित होता है।
- समाज को ज्ञानशाला के संदर्भ में जागरण भाए, इस दृष्टि से चातुर्मास प्रारंभ के आसपास 'संपर्क पखवाड़ा' आयोजित होता है।
- ज्ञानशाला से संबद्ध प्रशिक्षक व कार्यकर्त्ता समर्पित व सेवा भावना के साथ सक्रिय रूप में कार्य करते हैं। यह ज्ञानशाला मिशन का सकारात्मक पहलू है।
- राष्ट्रीय स्तर पर ज्ञानशाला प्रकोष्ठ के अंतर्गत राष्ट्रीय समिति का गठन होता है जिसके सदस्य राष्ट्रीय संयोजक के साथ परीक्षा, ई-विकास, संगठन एवं अन्य विभागों का कार्य संपादित करते हैं।

प्रभारी व संयोजक व्यवस्था

युगप्रधान आचार्य श्री तुलसी के युग में विधिवत् प्रारंभ ज्ञानशाला मिशन के प्रति विशेष ध्यान रखने का क्रम तत्कालीन महाश्रमणजी ने शुरू किया। वर्तमान में भी आचार्यश्री महाश्रमणजी का ज्ञानशाला के प्रति विशेष फोकस रहता है। सन् 2001 में युगप्रधान आचार्यश्री महाप्रज्ञ ने धर्मसंघ की प्रमुख संस्थाओं एवं प्रवृत्तियों के सुसंचालन व मार्गदर्शन हेतु प्रभारी साधु-साध्वियों की नियुक्ति की। इस क्रम में ज्ञानशाला हेतु प्रभारी के रूप में मुनि श्री सुमेरमलजी लाडनूँ व सह-प्रभारी के रूप में मुनि उदितकुमार को नियुक्त किया। मुनिश्री के मार्गदर्शन में प्रशिक्षक परीक्षा, ज्ञानार्थी पाठ्यक्रम व परीक्षा आदि विविध उपक्रम प्रारंभ हुए। ज्ञानशाला प्रारूप नए स्वरूप में आया। मंत्री पद पर आसीन होने के बाद सन् 2011 में परम् पूज्य आचार्यश्री महाश्रमणजी ने मुनि उदित कुमारजी को प्रभारी व मुनि हिमांशुकुमारजी की सहप्रभारी के रूप में नियुक्ति की। 30 नवम्बर 2012 से आध्यात्मिक पर्यवेक्षक के रूप में ज्ञानशाला उपक्रम का कार्य देख रहे हैं।

आचार्य श्री तुलसी की विशेष अनुज्ञा से श्री पदमचन्द पटावरी ने ज्ञानशाला उपक्रम को सँभाला। महासभा को उत्तरदायित्व मिलने के बाद भी पटावरीजी इस कार्य को देखते रहे। विधिवत् रूप से पहली बार 16 जुलाई 1994 को महासभा कार्यसमिति की मीटिंग में अध्यक्ष कन्हैयालाल जी छाजेड़ ने अपने उपाध्यक्ष पदमचंदजी पटावरी को ज्ञानशाला का प्रभारी बनाया। इस संदर्भ में उन्होंने संगठन यात्राओं एवं परिपत्रों के माध्यम से वातावरण बनाया। महासभा के हर अधिवेशन में

ज्ञानशाला का विवरण रखा जाता। सन् 1996 से ज्ञानशाला प्रकोष्ठ कार्यालय महासभा के जैविभा परिसर में स्थित अपने भवन 'अभ्युदय' से संचालित होने लगा। इस वर्ष पटावरी जी के प्रभारीत्व में मास्टर हिम्मतमलजी परमार (सूरत) संयोजक, श्री संपतराय कोचर (कोलकाता) तथा श्री रमेश भंसाली (असाढ़ा) सह-संयोजक बने।

सन् 1998 में ज्ञानशाला के राष्ट्रीय प्रभारी बने श्री हिम्मतमल परमार व राष्ट्रीय संयोजक बने श्री सोहनराज चौपड़ा सी.ए. (अहमदाबाद) प्रारंभ से अब तक पटावरी जी ने इसे एक अभियान व चुनौती माना। इस अवधि में ज्ञानशाला का आधार निर्मित हुआ। सन् 2000 में परमार जी का निधन हो गया। उनके बाद उपासक युवकरत्न श्री अशोक भाई संघवी प्रभारी तथा सोहनराजजी चौपड़ा संयोजक बने।

सन् 2001 में साधु-साध्वियों की प्रभारी रूप में नियुक्ति के बाद गृहस्थ प्रभारी शब्द बदल गया। सन् 2002 से 2006 तक अशोक भाई संघवी नियोजक तथा सोहनराज चौपड़ा संयोजक बने। सन् 2006 से नियोजक व्यवस्था समाप्त हो गई, मात्र संयोजक व्यवस्था रही। उस समय ज्ञानशाला प्रकोष्ठ के राष्ट्रीय संयोजक श्री सोहनराज चौपड़ा नियुक्त हुए। सन् 1998 से संयोजक के रूप में शुरू हुई उनकी ज्ञानशाला यात्रा निर्बाध रूप से चल रही है। श्री चौपड़ा की कार्य के प्रति लगन, ज्ञानशाला मिशन के प्रति निष्ठा, मिलनसारिता, विनम्रता व सहजता उल्लेखनीय है। एक-एक मिशन के लिए ऐसे व्यक्ति मिल जाएँ, तो वह मिशन सफलता के साथ निरंतर गतिमान रहता है।

ज्ञानशाला में कार्य विस्तार व नई परियोजनाओं को प्रारंभ करने के संदर्भ में राष्ट्रीय ज्ञानशाला समिति का गठन सन् 2014 में किया जिसमें सात सदस्यों का प्रावधान रखा है। इसकी मिटिंग दो व इससे अधिक अपेक्षानुसार होती है। सात सदस्यों में वर्तमान में, श्री निर्मल नौलखा व डालमचन्द नौलखा मुख्यत: प्रशिक्षक परीक्षा के अंतर्गत पूरे देश में त्रिदिवसीय शिविरों में प्रशिक्षण व परीक्षण मूल्यांकन का कार्य निष्ठा से करते हैं। भ्रातृ-द्वय प्रारंभ से इस कार्य में बहुत श्रम कर रहे हैं। दोनों उपासक प्राध्यापक समर्पित व जागरूक प्रशिक्षक हैं। अन्य पाँच सदस्यों में श्री गौतम डागा (ज्ञानशाला प्राध्यापक), श्री प्रो. रत्ना कोठारी (पाठ्यक्रम व शोध), श्री महेन्द्र कोचर (संगठन व आयोजन), श्री सुरेन्द्र लूणिया (परीक्षा प्रभारी) एवं श्री रमेश सुतरिया (ई-विकास) कार्य-निष्पादन करते हैं।

पुरस्कार श्रेणी

ज्ञानशाला मिशन में प्रशिक्षकों, कार्यकर्त्ताओं, ज्ञानार्थियों व संस्थाओं की प्रमुख भूमिका है। सबसे समन्वित प्रयास से यह मिशन समाज का सर्वाधिक रचनात्मक उपक्रम माना जाता है। समय-समय पर एक निर्धारित प्रक्रिया के अंतर्गत ज्ञानशाला के विभिन्न पुरस्कारों के लिए चयन किया जाता है और मर्यादा महोत्सव के अवसर पर उन्हें पुरस्कृत व सम्मानित किया जाता है। पुरस्कारों का स्वरूप इस प्रकार है—

- ज्ञानशाला : (1) श्रेष्ठ (2) विशिष्ट (3) उत्तम
- प्रशिक्षक : (1) श्रेष्ठ प्रशिक्षक (2) वरिष्ठ प्रशिक्षक
- श्रेष्ठ ज्ञानार्थी
- श्रेष्ठ ज्ञानशाला सहयोगी
- श्रेष्ठ संचालक संस्था
- श्रेष्ठ आंचलिक संयोजक
- परीक्षा परिणाम के आधार पर
- प्रशिक्षक परीक्षा—तीनों श्रेणियों में प्रथम तीन स्थान प्राप्तकर्त्ता
- ज्ञानार्थी परीक्षा—पाँचों श्रेणियों में प्रथम तीन स्थान प्राप्तकर्त्ता

विशेष आयोजन

ज्ञानशाला में जो प्रशिक्षक बने, उनको आचार्य श्री महाश्रमण की पावन सन्निधि में, दीक्षांत समारोह के अन्तर्गत डिग्री प्रदान की जायेगी। इस क्रम में सन् 2013 लाडनूँ चातुर्मास में प्रथम दीक्षांत समारोह व प्रशिक्षक सम्मेलन आयोजित हुआ। इसके बाद दिल्ली व विराटनगर में इसी तरह का आयोजन हुआ। ज्ञानशाला प्रकोष्ठ की संगोष्ठियाँ पिछले कई वर्षों से प्रतिवर्ष आयोजित होती हैं। इसमें समीक्षा के साथ व्यापक विमर्शपूर्वक निर्णय लिए जाते हैं।

ज्ञानाशाला प्रारूप के आधार पर ज्ञानाशाला प्रारंभ हुए पच्चीस वर्ष पूर्ण होने के संदर्भ में आचार्यश्री के आशीर्वादपूर्वक रजत जयंती वर्ष का आयोजन चल रहा है। यह वर्ष ज्ञानशाला की गुणवत्ता व संस्था-वृद्धि में कीर्तिमान गढ़े, ऐसा प्रयास चल रहा है। इस वर्ष ज्ञानशाला की वेबसाइट का शुभारंभ हो चुका है। ज्ञानशाला प्राध्यापक परियोजना, शिशु संस्कार बोध का नए प्रारूप में प्रकाशन, ई-सर्विस, ज्ञानशाला पुस्तकालय आदि अनेक उपक्रमों को प्रारंभ करने की प्रक्रिया मंथर गति में चल रही है, पर उत्साह के साथ से आगे बढ़ रही है।

ज्ञानशाला ऐसा सशक्त व परिणाममुखी अभिक्रम है जहाँ बाल पीढ़ी का संस्कार निर्माण होता है। हमारे धर्मसंघ की यह महत्त्वपूर्ण रचनात्मक प्रवृत्ति है। परम पूज्य आचार्य श्री महाश्रमण का वरद-हस्त इसे प्राप्त है। बच्चे परिवार, समाज एवं देश की अमूल्य धरोहर हैं। एक संस्कारी बालक स्वयं के जीवन व परिवार के लिए आदर्श कार्य करता है। सुसंस्कारी भावीपीढ़ी को तैयार करने वाले इस उपक्रम में सबका समग्रता से सहकार आवश्यक है।

हार्दिक मंगलकामना

श्रद्धावनत

श्रद्धानिष्ठ श्रावक : केशरीमल जी चिण्डालिया

अनिल कुमार, संजय कुमार, सुनील कुमार

सिद्धार्थ, सुजल

शिवानी, सुहानी, साँची चिण्डालिया

गंगापुर (राज.) 01481-221100

उधना - सूरत 0261-2296492

मोनिका प्रिन्टस प्रा. लिमिटेड

बी-1001, न्यू टी.टी. मार्केट, रींग रोड, सूरत-395002

मोबाइल : 98251 46863, 0261-2311364

ज्ञानशाला : जन विचार

धर्म संघ के लिए कुछ कर सकूँ, यह इच्छा बचपन से थी और आज यह ज्ञानशाला के माध्यम से पूरी हो रही है। जो संस्कार व ज्ञान मैंने ज्ञानशाला से लिए हैं, मैं चाहती हूँ कि आज के बच्चों में भी वही संस्कार व ज्ञान विकसित होने चाहिए और इसके लिए मैं अपनी ओर से पूरा प्रयास कर रही हूँ।

मेरे सभी परिवार-जन धार्मिक प्रवृत्ति के हैं। वे मुझे इस कार्य के लिए प्रेरित करते हैं और मेरा पूर्ण सहयोग भी करते हैं। आज के युग के बच्चे चंचल व शरारती होते हैं पर मैं उनके साथ बच्चों जैसा ही व्यवहार करती हूँ ताकि वो मुझे अपने मन की बात बता सकें। अगर कोई बच्चा मुझसे प्रश्न करता है और मुझे उसका सही उत्तर नहीं आता तो मैं उसे अगले सप्ताह बताने का वादा करती हूँ। तर्कशील प्रश्नों का उत्तर तर्क और उदाहरण से देती हूँ।

मेरी नींव भी ज्ञानशाला से ही तैयार हुई है। जब मैं ज्ञानशाला में पढ़ती थी तो मुझे रविवार का इन्तजार रहता था और आज भी मुझे रविवार का इन्तजार रहता है। बच्चों को शिक्षण देने की वजह से मेरा ज्ञान भी विकसित हो रहा है।

मधु फलोदिया

ज्ञानशाला में मेरे समय का सदुपयोग होता है और श्रम से जीवन में निखार आता है। भगवान महावीर ने बारह प्रकार की तपस्या बताई है। उसमें स्वाध्याय भी एक तपस्या है। स्वाध्याय करने से मन एकाग्र बनता है और आत्मा आंशिक उज्ज्वल बनती है। स्वयं अध्ययन करने व बच्चों को अध्ययन करवाने में तिन्नाणं-तारयाणं वाली बात यथार्थ होती है। हम स्वयं तीन-चार घंटे अध्ययन करते हैं, तभी बच्चों को एक-दो घंटे पढ़ा सकते हैं। इस प्रकार हमारा भी ज्ञान बढ़ता है और बच्चों का भी ज्ञान बढ़ता है। बच्चों को पढ़ाने में मुझे खुशी होती है।

परिवारवाले कहते हैं कि हमें समाज व संघ के लिए सेवा जरूर देनी चाहिए। जब मैं ज्ञानशाला के लिए कुछ श्रम करती हूँ तो परिवारवालों को खुशी मिलती है। आज के युग में बच्चों को पढ़ाना एक चुनौती है। घर में एक-दो बच्चों को सम्भालना भी भारी पड़ता है तो इतने सारे बच्चों को सम्हालना कितना भारी होता होगा? लेकिन हम एक माँ बनकर, एक दोस्त बनकर, ढेर सारा प्यार देकर, कुछ कहानियाँ सुनाकर, गेम्स खिलाकर बच्चों को अपना बना लेते हैं। ज्ञानशाला से जुड़ने के बाद मेरी समयबद्धता एवं कार्यकुशलता बढ़ी है। सौहार्द एवं प्रेम का विकास हुआ है।

सुशीला बड़ाला

ज्ञानशाला के माध्यम से हमने संघ की सेवा करने की कोशिश की है। समय का सच्चा सदुपयोग किया है। पहले पढ़ना और फिर पढ़ाना दोनों के लिए समय निकालना, ऐसा करके अनावश्यक वृत्तियों से चित्त को हटाकर धर्म में लगाया। हमारे विचार में, निर्जरा का अच्छा माध्यम है ज्ञानशाला।

ज्ञानशाला में हमारे प्रशिक्षण देने से हमारे परिजनों को गर्व की अनुभूति होती है। हमारे परिजन इसे शुभ भविष्य के रूप में देखते हैं। शुद्ध उच्चारण, सही राग, सही जानकारी देना प्रशिक्षक का परम कर्त्तव्य है। बच्चे तर्कशील होते हैं, हम उनको सन्तोषप्रद समाधान देने के लिए उदाहरणों का सहारा लेते हैं।

मैंने नियमितता से प्रत्येक कार्य करना सीखा। प्रबंधन की योग्यता बढ़ी है। गायन, लेखन, नेतृत्व आदि सभी क्षेत्रों में हमारा विकास हुआ है। स्वभाव में मृदुता आई है। इतने सारे बच्चों को पढ़ाने से पहले अपने आप को कुछ कोमलता व विनोदपूर्ण स्वभाव का बनाया है। हमारे आचरण में धार्मिकता परिलक्षित हुई है। हमारा तत्त्वज्ञान ठोस हुआ है। सम्यग् ज्ञान दर्शन और चारित्र से हमारी श्रद्धा दृढ़ हुई है। हमारे विचारों की संकीर्णता दूर हुई है।

किरण बरमेचा

ज्ञानशाला में समय का सदुपयोग हो रहा है। हमारे कर्मों की निर्जरा भी हो रही है। जितना हम श्रम करेंगे, व्यक्तित्व में उतना निखार आयेगा। परिजनों के सहयोग से ही हर कार्य संभव है। नई पीढ़ी को संस्कारित करने में मैं सहभागी बन रही हूँ परन्तु इस कार्य में मेरे परिजन मेरा पूरा सहयोग कर रहे हैं। मुझे बच्चों को पढ़ाने में आनन्द आता है। चंचल शरारती बच्चों को कथानक, चुटकुले, संस्मरणों से समझाती हूँ। मैं छोटी-छोटी बातों के बारे में अपने को विज्ञ समझती थी पर बच्चों को पढ़ाते-पढ़ाते अपनी कमियों को भरने का अवसर प्राप्त हुआ। कंठस्थ ज्ञान बढ़ा। अनुशासन, संयम, समयबद्धता का पाठ सीखा।

कुसुम बैद

समय और श्रम के रूप में सेवा देखकर हमें बहुत गर्व महसूस होता है। ज्ञानशाला में प्रशिक्षण देने से हमारे परिजन यही सोचते हैं कि हम अपने गुरु के सपनों को साकार कर रहे हैं। चंचल, शरारती, तर्कशील बच्चों को हम प्यार से कहानियाँ सुनाकर समझाते हैं। ज्ञानशाला में आकर हमारे में जो बदलाव

अभातेयुप : विज़न 2015-2017

ABTYP WORKSHOP
personality development

Acharya Tulsi
Diagnostic Centre

सत्कार

अखिल भारतीय
तेरापंथ टाइम्स
संघीय समाचारों का साप्ताहिक मुखपत्र

युवादृष्टि
YUVA HORIZON
A SOCIO-RELIGIOUS JAIN JOURNAL

युवा वाहिनी

सरगम
A Golden Voice Of Terapanth

जैन
संस्कार
विधि

you have, you can...
MEGA
BLOOD
DONATION
DRIVE

JAIN TERAPANTH NEWS
JTN

DATA
collection

योगक्षेम
जना

अभ्युदय

तेरापंथ किशोर मंडल

ATJH
Acharya Tulsi Jain Hostel

नूतन चिन्तन - नया विकास, युवकों में जागे विश्वास

आया है, वह यह है कि हमें अपना पूरा कंठस्थ ज्ञान वापस याद हो गया। बच्चों को सिखाते-सिखाते हमारे ज्ञान का भी विस्तार हुआ।

रेखा गेलड़ा

समय और श्रम के रूप में सेवा देकर मैं अपने आपको भाग्यशाली मानती हूँ। समय तो सबके पास है लेकिन उस समय के सदुपयोग करने का मौका मुझे मिला है। बात है श्रम की, इसमें श्रम तो कुछ भी नहीं है। यह तो अपने ही परिवार के बच्चों को संस्कारवान बनाने की योजना है।

मेरे परिजन, चाहे मेरे पति हों या मेरी बेटियाँ, सब मेरा उत्साह बढ़ाते हैं। परिवार वालों को खुशी और गर्व महसूस होता है कि हमारे परिवार की सदस्या संघ की सेवा में अपना अल्प योगदान दे रही है।

तर्कशील, चंचल, शरारती, छोटे बच्चों को पढ़ाना एक बड़ी चुनौती है। मैं बच्चों को प्यार से समझाती हूँ। आज के बच्चे प्रमाण के बिना कोई बात जल्दी नहीं मानते। मैं पूरा प्रयास करती हूँ कि बच्चों को आज के युग के हिसाब से प्रमाण देकर समझाऊँ। बच्चों को पढ़ाने में और अर्थ समझाने में कभी-कभी दूसरी किताबों का भी सहारा लेती हूँ। कभी-कभी सही उत्तर नहीं दे पाती, तो बच्चों को अगले रविवार को उत्तर देने के लिए कहती हूँ। चारित्रात्माओं से पूछकर मैं अगली कक्षा में सही उत्तर बताती हूँ।

बच्चों को पढ़ाते-पढ़ाते मुझे भी आगे बढ़ने की प्रेरणा मिली है। बच्चों को महाप्राण ध्वनि कराते-कराते मेरा भी नियम बन गया है। वक्तृत्व शैली का विकास हुआ है।

ललिता बरलोटा

भीषण गर्मी में झुलस रहा व्यक्ति जिस प्रकार गरमी से बचने के लिए पेड़ की ठंडी छाँव के नीचे आता है, वैसे ही ज्ञानशाला वह वृक्ष है जिसके नीचे आकर हम प्रशिक्षक व बच्चे तनावों से मुक्त होते हैं, व विकास के नये आयामों की ओर कदम बढ़ाते हैं।

ज्ञानशाला में अपने समय और श्रम के रूप में सेवा देकर, आत्मिक सुख की अनुभूति होती है। मन में प्रसन्नता के भाव आते हैं कि देव, गुरु और धर्म के प्रताप से इस जन्म में सेवा-कार्य की संभागी बन सकी। इस औदारिक शरीर का कुछ अंश में सार निकाल पा रही हूँ।

ज्ञानशाला में हमारे जाने से, परिजनों को बहुत प्रसन्नता होती है व वे भी अपना पूरा सहयोग प्रदान करते हैं।

आज के युग में बच्चों को पढ़ाना चुनौतीपूर्ण काम जरूर है पर नामुमकिन नहीं है। कंठस्थ भाग को अर्थ के साथ समझाकर याद करवाते हैं, और तत्त्व की बातों को किताबों में लगी तस्वीरों को दिखाकर या उससे संबंधित कोई कहानी बोल कर समझाते हैं।

ज्ञानशाला में आकर ऐसा महसूस होता है, मानो आत्मा को आहार मिल रहा हो। बच्चों की जिज्ञासाओं का समाधान करते-करते हमारी काफी जिज्ञासाओं के हल मिल जाते हैं। हमारे ज्ञान-अर्जन की क्षमता बढ़ी है, उत्तेजना में कमी आई है। सरलता के भाव आये हैं।

रूपकला भंडारी

ज्ञानशाला से ना सिर्फ ज्ञानार्थी को अपितु हमें भी बहुत कुछ सीखने को मिलता है। हमारे द्वारा प्रशिक्षित ज्ञानार्थी का भविष्य सुनहरा बनता है तो हमारा दिया हुआ समय और श्रम सार्थक प्रतीत होता है। यहाँ सेवा देना तपस्या से भी बढ़कर है, ऐसा प्रतीत होता है। ज्ञानशाला को लेकर परिवारजनों की मेरे प्रति उनकी सकारात्मक सोच है।

आज के युग में बच्चों को पढ़ाना चुनौती है। जीवन विज्ञान के प्रयोगों द्वारा उनके मन को शांत बनाया जाता है। इन प्रयोगों द्वारा मन की चंचलता कम होकर, एकाग्रता बढ़ती है। रचनात्मक कार्य करवाकर उनको आकर्षित किया जाता है। तर्कशील बच्चों के लिए हम पूरी तैयारी के साथ ज्ञानशाला जाने की कोशिश करते हैं ताकि जो विषय पढ़ाया जाये, उसके बाद बच्चे जो भी तर्क, जिज्ञासा करें, उसका सही समाधानात्मक उत्तर दिया जाये।

ज्ञानशाला से जुड़ने के बाद जीवन शैली में बदलाव आया है। आत्मविश्वास मजबूत हुआ है। बहुआयामी व्यक्तित्व विकास के दरवाजे खुले हैं।

पूर्णिमा पारख

समय और श्रम के रूप में सेवा देकर मुझे बहुत अच्छा लगता है। जहाँ तक श्रम का प्रश्न है, तो मैं कहूँगी कि ज्ञानशाला में अपना समय देना, कोई श्रम नहीं है। जब हम अपने बच्चों को पढ़ाते हैं या कुछ सिखाते हैं तो क्या उसे हम श्रम कहेंगे? प्रशिक्षिकाओं का एक परिवार है और इस परिवार के बच्चे अपने ही बच्चे हैं।

परिवारजनों की अच्छी सोच है। मेरे पति मेरा बहुत सहयोग करते हैं। वो स्वयं मुझे बताते हैं कि हम ज्ञानशाला में क्या नया कर सकते हैं। सभी को भरोसा है कि यह बच्चों के लिए अच्छा सेवा कार्य कर सकती है।

चंचल, शरारती और तर्कशील बच्चों को तर्क, प्रमाण

India's First
REAL SMART
RO Water Purifier
Hi-Tech
SINCE 1995
Cloud
Reduce ! Reuse ! Recycle !
Zero Waste Water
Reduce waste water outflow
Reuse waste water into purification process
Recycle waste water till the TDS reaches extreme limit
TDS DISPLAY
NO WATER CONNECTION
Pour - Plug - Purify
It's your very own
Personalised
& Portable RO
NO
INSTALLATION
SERVICE
WATER WASTE
TOXIC RISK
LEAKAGE RISK
harmony-2707222
Hi Tech Sweet Water Technologies Pvt. Ltd.
Call Center : +91 99740 88718 | Toll Free No.: 1800 120 1212
Email: sales@hitechro.net | www.hitechro.net Buy From
Hi-Tech Cloud
Hitech Cloud
Download from
Google play
Download on the App Store

एवं प्रेम से आसानी से समझाया जा सकता है। बच्चों को कभी डाँट-फटकार से नहीं समझाया जा सकता। उन्हें तो प्यार से, दुलार से समझाया जाता है।

मनीषा बोथरा

मन में शांति मिलती है। खुशी होती है कि बच्चों के भविष्य निर्माण में हमारा भी सहयोग है। परिवार के लोग गर्व महसूस करते हैं कि एक अच्छे कार्य में हमारा भी योगदान है व हमें भी आध्यात्मिक ज्ञान मिलता है। बच्चों को धैर्यपूर्वक, शांतिपूर्वक, कहानी के माध्यम से, महापुरुषों के प्रेरक-प्रसंग व जीवनी से, मनोवैज्ञानिक तरीके से सुसंस्कृत करने की कोशिश करते हैं। ज्ञानशाला की कुछ वर्षों की सेवा के बाद मेरे अंदर सहनशीलता, धैर्य, समयबद्धता, संयम आदि गुणों का काफी विकास हुआ।

तारा राखेचा

ज्ञानशाला से जुड़ने के बाद हमने समय का प्रबंधन सीखा। रविवार के दिन अपनी दैनिक चर्या से दो घंटे का समय ज्ञानशाला के लिए निर्धारित किया। ज्ञानशाला में बच्चों को पढ़ाते हुए स्वयं के अध्ययन और ज्ञान का पुनरावर्तन होता है।

ज्ञानशाला में जुड़ने के बाद पारिवारिक-जन सभी प्रकार से सहयोग करते हैं। उन्हें भी गर्व होता है कि ज्ञानशाला के द्वारा संघ की सेवा का सुअवसर मिला है।

आज के युग के बच्चों को केवल पुस्तकीय ज्ञान के द्वारा पढ़ाना और समझाना मुश्किल है। ज्ञानशाला में संस्कार ज्ञान के समय सरलता, विनम्रता, सहिष्णुता आदि विषयों की कहानियाँ सुनाकर प्रभावित किया जाता है। बच्चों को नए-नए खेल के द्वारा भी खेल-खेल में मौखिक ज्ञान कंठस्थ करा सकते हैं। बच्चों को प्रोजेक्टर पर भी धार्मिक चित्र आदि दिखा सकते हैं।

जिस प्रकार सभी बच्चे तनावमुक्त और प्रफुल्लित रहते हैं, उसी प्रकार ज्ञानशाला में छोटे-छोटे बच्चों के साथ रहकर सदैव प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। साथ ही बच्चों को सिखाते हुए स्वयं भी नये-नये प्रयोगों के द्वारा अपना विकास भी कर सकते हैं।

रंजना दूगड़

अपने समय और श्रम का सुनियोजित रूप से नियोजन कर समाज के प्रति अपने दायित्व का निर्वाह करते हुए प्रसन्नता महसूस करती हूँ। किसी वस्तु को वही दे सकता है जिसके पास वह वस्तु होती है और हमें ईश्वर ने नेक काम के लिए समय भी दिया है और मेहनती भी बनाया है।

परिवार-जन सोचते हैं, आपके पास जो है, कम-से-कम आप उतना समाज को देकर अपने दायित्व का निर्वाह करें। मेरे परिजनों का मुझे पूर्ण सहयोग प्राप्त है।

बच्चों का चंचल व शरारती होना स्वाभाविक है परन्तु वे मन से निर्मल होते हैं। उनकी बातों को समझकर, उनकी समस्याओं को सुलझाकर, बच्चों को सही दिशा-निर्देशन दिया जा सकता है। बच्चों को कोई भी निर्देशन देने से पहले स्वयं को भी उसका पालन करना होता है। बच्चों के तर्कों को सुनकर उन्हें डाँटने-फटकारने के बजाय उनके विचारों को तर्कसंगत रूप से समाहित करने की कोशिश करनी चाहिए।

अपने सभी कार्यों को उचित समय पर करने की प्रेरणा ज्ञानशाला के कार्यों से मिली। धर्म के प्रति रुचि बढ़ी। बच्चों को नित्य प्रतिदिन नई बातें बताने के लिए अधिक-से-अधिक स्वाध्याय करने की आदत बन गई। नेतृत्व व व्यक्तित्व क्षमता में उत्तरोत्तर विकास होने लगा। आत्मीय शांति मिली एवं जीवन आनन्दमय हुआ।

ऋतु जैन

आध्यात्मिकता का विकास हो रहा है तथा ज्ञानशाला कर्मों की निर्जरा का भी साधन है। परिवार-जन सोचते हैं कि समय का सदुपयोग हो रहा है तथा संस्कारों का भी बीजारोपण हो रहा है। बच्चों का मनोबल बढ़ाते हैं तथा उन्हें कहानी सुनाकर भी उनमें बदलाव लाने की कोशिश करते हैं। ज्ञानशाला में आकर हमारे अन्दर विनय, शालीनता, अनुशासन एवं आध्यात्मिकता का विकास हुआ।

प्रेक्षा सालेचा

समय और श्रम लगाकर अपने पूर्वसंचित ज्ञान को सुरक्षित करने का इस उपक्रम से अच्छा कोई माध्यम नहीं है। मुझे धर्मसंघ की सेवा करने का सुन्दर अवसर मिला है। परिजन गर्व का अनुभव करते हैं तथा यथासंभव सहयोग भी देते हैं।

बच्चों को पढ़ाना और ज्ञानदान करना एक चुनौती जरूर है पर चुनौती को स्वीकार कर शुभ भविष्य की कल्पना आनन्द की अनुभूति कराती है। चंचल शरारती बच्चों को कहानी तथा उदाहरणों के माध्यम से तथा तर्कशील बच्चों को अपनी जानकारी के अनुसार समझाने का प्रयास करती हूँ। ज्ञानशाला से जुड़ने के बाद मेरे मन-मानस में ज्ञान-विज्ञान और प्रत्याख्यान की चेतना जगी, मनोबल बढ़ा।

प्रभा सेठिया

|| जय भिक्षु || || अर्हम || || जय महाश्रमण ||

श्रद्धांजलि

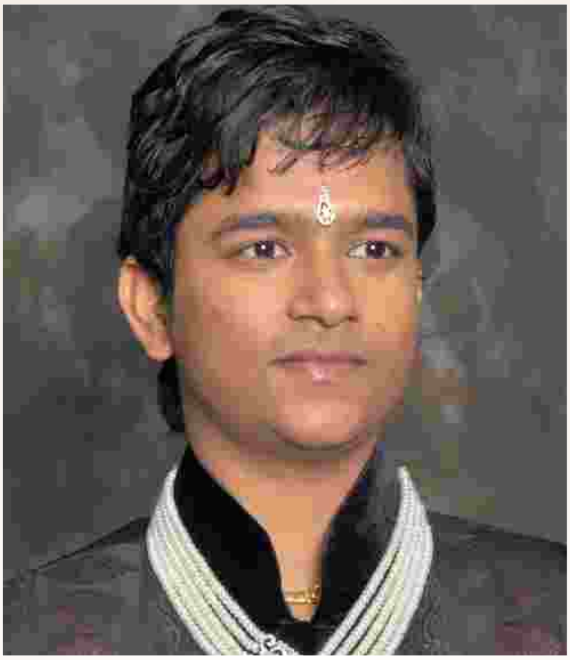

स्व. दिपेश रमेशचन्द्र गुगलिया

जन्म - 03-11-1987 स्वर्गवास - 10-02-2012

क्यों रूठ गए तुम हम सबसे, दिलों में हो गया सूनापन।
कर्मों का ऐसा चक्र चला, छोड़ चले तुम सब बन्धन।।

aroma®

PLASTICS

MFG. : QUALITY REPROCESSORS L.D., H.D., H.M., P.P.

16-17 Gopal Estate, Opp. Vallabhnagar, Odhav Road, Ahmedabad - 382 415 Guj. India
Tel. : + 91 79 22870270 Tele Fax : 079 - 22891528
Email: aromaplastic@yahoo.co.in

श्रीमती मांगीदेवी - भेरुलाल
श्रीमती संतोषदेवी - स्व. श्री मीठ्ठालालजी
सुशीलादेवी - रमेशचन्द्र

लीलादेवी - भिखमचन्द
पूजा - विरल
सहयोग, अंशुल एवं गुगलिया परिवार

ज्ञानशाला का विस्तार

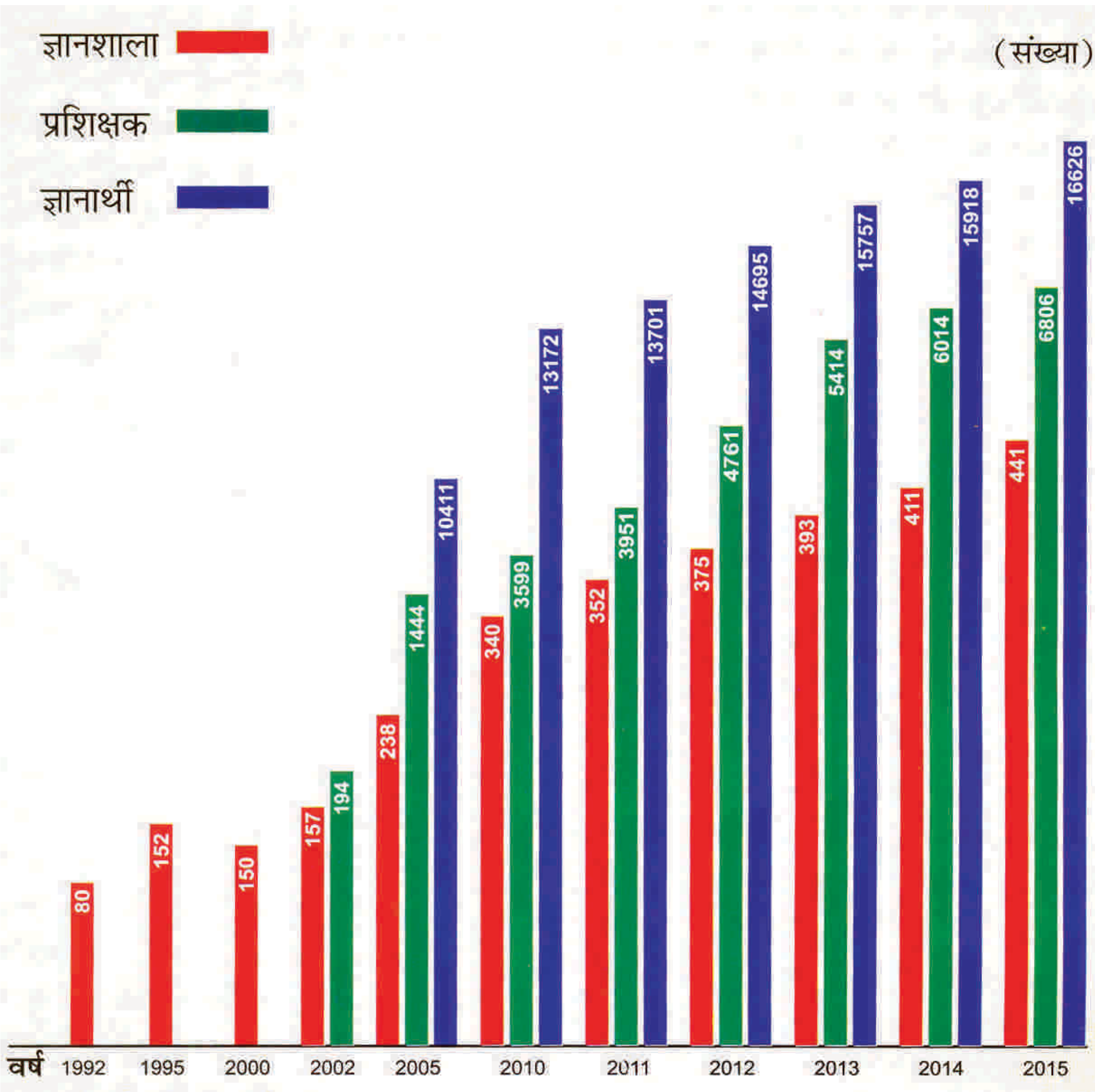

- महासभा द्वारा प्रस्तुत 'ज्ञानशाला प्रारूप' के अनुरूप चलने वाली मान्यता प्राप्त ज्ञानशालाओं की संख्या है।
- ज्ञानशाला प्रशिक्षक परीक्षा के अंतर्गत विज्ञ व विशारद सन् 2002 तथा स्नातक सहित तीनों श्रेणियों की परीक्षा सन् 2004 में प्रारम्भ हुई।
- प्रशिक्षकों की तीनों श्रेणियों की यह Cumulative संख्या है।

www.marveltea.com
MARVEL
हर लम्हा नया हो जाए
"मेरी मारवल चाय"
MARVEL Tea
Since 1994
GOLD PATTIAN
Classic
WITH LONG LEAVES FROM DARJEELING
Har lamha naya ho jaaye
मारवल चाय...खुशबू और ताज़गी ऐसी की आपके साथ-साथ फिज़ाए भी सुगंधित और सम्मोहित हो जाएं। मारवल चाय आप में भर देती है एक अनोखी स्फूर्ति और बनाए रखती है आपको हरपल तरोताज़ा...तभी तो कहते हैं जो भी इसे एक बार होठों से लगाए...उसका हर लम्हा नया हो जाए।
Corporate Office : Marvel House 19, Sec. 44, Gurgaon - 122 003 info@marveltea.com
MARVEL Tea
Since 1994
/MarvelTeaEstate

ज्ञानशाला के 22 अंचल

IT Specialist in Retail and Wholesale

Computer Planet

Technology for the changing world...

No 10, Blackers Road,{Narasingapuram Street corner], Mount Road
Chennai-600 002 Phone : 044 43227474 Email: sales@cponline.co.in

BRANDED DESKTOPS
ALL IN ONE DESKTOPS
TABLETS
PC COMPONENETS
ORINIGAL WINDOWS
LCD / LED MONITORS

TOUCH SCREEN MONITORS
PRINTERS
MUTIFUNCTION PRINTERS
MULTIMEDIA GADGETS
INK & TONER CARTRIDGES
NETWORKING PRODUCTS

Computer Planet

Chennai Private ltd

Technology for the changing world...

No 5 Blackers Road, Near Casino Theatre, Mount Road,Chennai-600 002
Phone : 044 43856687 Mobile : 9884688555 Email: laptop@cponline.co.in

Laptops
Gadgets
Tablets
Iphones
Ipads
Projectors
Laptop Chip Level Service
Broken laptop Rework
Data Recovery

चुनौतियों से मिलती है सीख

प्रवीण शर्मा

यदि हम समझते हैं कि जो लोग सफल हैं, वे इसलिए हैं, क्योंकि उन्हें अपने कार्य में कोई बाधा नहीं आई, तो हम गलत समझ रहे हैं। हकीकत में वे सफल इसलिए हैं क्योंकि उन्होंने किसी भी बाधा को अपनी राह की रुकावट नहीं बनने दिया, बल्कि उसका कुछ न कुछ समाधान निकाल लिया। हर बाधा से कुछ न कुछ सीखा और अपने आपको उससे जीतने योग्य बनाया।

हम तमन्ना तो जीवन में बड़ी सफलता की रखें और छोटी-छोटी बाधाओं से घबरा जाएँ। बार-बार यह सोचते रहें कि काश कोई ऐसा तरीका मिल जाए, जिसमें बिना किसी बाधा के कोई बड़ी सफलता मिल जाए, तो हमारी यह इच्छा बेबुनियाद है। जिन लोगों को आदर्श मानकर उनके जैसा सफल हम होना चाहते हैं, तो जरा उनकी प्रवृत्तियों को भी देख लेना कि बाधाएँ आने पर उनका नजरिया किस प्रकार का रहता है?

ऐसा भी नहीं है कि छोटा कार्य करो, तो उसमें चुनौतियाँ नहीं आती हैं, उसमें संघर्ष नहीं करना पड़ता है। संघर्ष हर कार्य में करना पड़ता है। संघर्ष छोटे कार्य के लिए करेंगे, तो छोटा ही परिणाम हासिल होगा और बड़े कार्यों के लिए करेंगे, तो परिणाम भी बड़ा हासिल होगा।

चुनौतियों के साथ हम अपने रवैये को ठीक रखें, तो वे जीवन के लिए एक तरह की सौगात हैं। ये हमें सीखने और शक्तिशाली बनने का अवसर प्रदान करती हैं। ये हमें अपने आपको जानने और समझने का मौका देती हैं। हमें अपने अस्तित्व का अहसास कराती हैं। हमें मान-सम्मान व इज्जत दिलवाती हैं।

दो दोस्त बहुत वर्षों बाद मिले। दोनों ने स्कूल में साथ-साथ अध्ययन किया था। तब दोनों ही बहुत सामान्य परिवार के थे। दोनों अपने पिता के इकलौते पुत्र थे। अभी मिले, तो एक बहुत अमीर बन चुका था और एक बुरी हालत में जी रहा था। जो गरीबी की हालत में था, उसने अपने अमीर दोस्त से पूछा—तुमने यह सब कैसे हासिल किया? अमीर दोस्त का उत्तर था—जीवन में आई मुश्किलों ने यहाँ तक पहुँचा दिया। उन्होंने मुझे इतना सब कुछ सिखा दिया कि आज मुझे किसी लायक बना दिया है।

अमीर दोस्त ने अपने गरीब दोस्त से पूछा कि तुम तो हर बात में मुझसे होशियार थे, आज तुमने अपनी यह हालत बना रखी है। तब उसका भी यही उत्तर था—जीवन में आई मुश्किलों ने यहाँ तक पहुँचा दिया। मुझसे सबकुछ छीन लिया और आज मेरे पास कुछ भी नहीं है।

खराबी चुनौतियों में नहीं है। चुनौतियों को हम किस प्रकार लेते हैं, इस पर हमारे जीवन की सफलता निर्भर करती है।

प्रतियोगिता अगस्त-2017 के उत्तर

उत्तर 1. (A) अपनी भूल स्वीकार करना।
(B) मौन रहना, चिन्तन करना।
(C) दूसरी जगह पर उठकर चले जाना।
(D) क्षमा का संकल्प करना।

उत्तर 2. तीन (1) साध्वीप्रमुखा झमकू जी,
(2) साध्वीप्रमुखा लाडां जी,
(3) महाश्रमणी साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा जी।

उत्तर 3. ज्ञान का घमण्ड करने से।

उत्तर 4. एक बार।

उत्तर 5. सत्य पर डटे रहो।

उत्तर 6. मकान को दान देकर तरने वाला शय्यातर होता है।

उत्तर 7. प्राण जीव है।

उत्तर 8. नौ कारण हैं—अन्न, पान, लयन (स्थान), शयन, वस्त्र, मन, वचन, काय, नमस्कार।

उत्तर 9. ज्ञान, दर्शन, चारित्र।

उत्तर 10. चिन्ता, विषय, कषाय।

प्रतियोगिता विजेता

प्रतियोगिता के अन्तर्गत बड़ी संख्या में पाठकों ने भाग लिया। युवादृष्टि के लिये यह उत्साहवर्धक है। अगस्त-2017 को लॉटरी द्वारा निकाला गया है। जो निम्न प्रकार हैं-

प्रतियोगिता अगस्त-2017

प्रथम— श्रीमती मंजू डागा, रायपुर

द्वितीय— हीना रंजीत जैन, सूरत

तृतीय— प्रेमलता एस कोठारी, अहमदाबाद

सभी सफल प्रतियोगियों को हार्दिक बधाई एवं मंगलकामनाएँ। पारितोषिक डाक/कोरियर द्वारा पते पर प्रेषित किया जाएगा।

II Jai Bhikshu II

II Jai Mahashraman II

With Best Wishes From

Vimal Kataria (MD)
Madhu Kataria

दर्पण जैसा पारदर्शी हो, निर्मल जीवन-उच्च आचरण
संघ-संगठन हित सिद्धि में, बढ़ चले अविराम चरण
आम बूंदों के अभिचिंतन से, महकाये हम गण का उपवन
श्रद्धा-निष्ठा बहे नस-नस में, संघ के प्रति हो पूर्ण समर्पण

VAISHNODEVI
LUSH GREENS

BUILDERS | DEVELOPERS | PROMOTERS

Regd. Office
Vaishnodevi Lush Greens Pvt. Ltd.
#459, 4th Floor, 12th Main
M. C. Layout, Near Vijayanagar Post Office
Vijayanagar
BANGALORE-560040 (Karnataka)
Ph.: 23146429, M.: 9620799999, e-mail: vimalkataria9@gmail.com

Rekha Jewellers
#1025, 8th Cross, K. R. H. Road
Sai Complex, Ashoka Road, Mysore

Shailbhadra Jewellers
#1328, 7th West Cross
Ashoka Road, Mysore

Manoharlal, Praveenkumar, Janak, Yogesh
Vimal, Vikas, Vishal, Vinay, Gourav
Chirag, Manav, Yash Kataria
(Bemali)

KATARIA
INFFRA

प्रकाशन सदस्यता फार्म

अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद्

प्रकाशन : युवादृष्टि ( )

अखिल भारतीय तेरापंथ टाइम्स ( )

(कृपया उपयुक्त कॉलम में (✓) करें)

नाम : ....

पता : ....

....

फोन नं. : .... मोबाइल नं. : ....

ई-मेल : ....

सदस्यता शुल्क : आजीवन (पन्द्रह वर्षीय) 3500 रुपये प्रत्येक ( ) त्रैवार्षिक 900 रुपये प्रत्येक ( )

शुल्क भुगतान विवरण : नगद ( ) चेक/डीडी ( )

चेक/ड्राफ्ट संख्या .... दिनांक : ....

बैंक .... शाखा ....

(जमा राशि की रसीद फार्म के साथ संलग्न करें)

कृपया यहाँ से काटें

दिनांक (हस्ताक्षर)

1. सदस्यता फार्म पूर्ण विवरण सहित निम्न पते पर भेजें :
   अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद्, 'युवालोक', पोस्ट लाडनूं-341306, जिला-नागौर (राजस्थान)
   दूरभाष : 01581-226114, ई-मेल : abtyp.ladnun@yahoo.in
2. बैंक विवरण (शुल्क जमा करने हेतु) : ओरिएन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स, शाखा - लाडनूं
   चालू खाता संख्या : 10272010002800

युवादृष्टि

बदले सबकी सृष्टि...

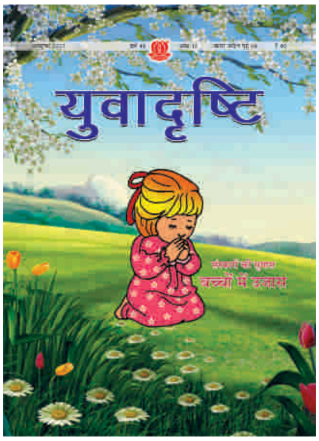

बालकों को अगर छोटी उम्र में ही उचित शिक्षा और व्यवहार का प्रशिक्षण मिल जाए तो वे उत्तरोत्तर विकास करते रहते हैं। संस्कार का निर्माण बचपन में ही आवश्यक है। ज्ञानशाला में बच्चों को संस्कारों का उचित परिवेश मिलता है। जिससे कि वे अपने सफल भविष्य का निर्माण कर सकें। प्रस्तुत अंक बच्चों के संस्कार निर्माण पर आधारित है। नि:संदेह पाठकगण इसका समुचित उपयोग कर सकेंगे।

जीवन में आए दु:खों के निवारण में आत्मविश्वास के साथ-साथ अध्यात्म भी हेतु बनता है। मंत्र-स्तोत्र आदि संबल का कार्य करते हैं। ये स्तोत्र प्रतिकूल परिस्थितियों में ऊर्जा का कार्य करते हैं। इन्हीं स्तोत्रों की महिमा बताता आगामी अंक-

ऊर्जा का अजस्र स्रोत—स्तोत्र

आमंत्रण-रचनाएँ

''युवादृष्टि'' पत्रिका के आगामी विशेषांक के लिए सर्व चारित्रात्माओं एवं प्रबुद्ध लेखक/लेखिकाओं की रचनाओं का हम हार्दिक स्वागत करते हैं। रचनाकार अपनी गद्य/पद्य रचना लाइन वाले फुलस्केप पेज पर एक तरफ उचित मार्जिन रखकर ही भेजें। **कोरे पन्ने पर अस्त-व्यस्त लिखी रचनाओं पर ध्यान नहीं दिया जाएगा। सुंदर अक्षरों में लिखी या टाइप की गई रचनाओं को प्राथमिकता दी जाएगी।** आपकी रचनाएँ मौलिक होनी चाहिए। अप्रकाशित रचनाएँ वापस नहीं भेजी जाएँगी, रचनाकार स्वयं के पास एक प्रति अवश्य रखें एवं कार्यालय में भेजी गई रचनाओं के प्रकाशन विषय में पूछताछ ना करें।

आपके लेख एवं प्रोत्साहन प्रतिक्रियाएँ हमें लगातार प्राप्त हो रही हैं। पाठकों के ''युवादृष्टि'' के प्रति अपार स्नेह का हम अत्यंत सम्मान करते हैं।

''विशेष-आकर्षण''

- स्वास्थ्य विशेष
- बच्चों की दुनिया
- कॅरियर विशेष
- अब तो जागें
- प्रबंधन-सूत्र
- आज की बात

आगामी अंक के सम्भावित विषय

विषय	रचना भेजने की अंतिम तिथि
गाएँ विजय का गीत	15 अक्टूबर, 2017
कि पैसा बोलता है	15 नवम्बर, 2017

रचनाएँ भेजने का पता

SUDHIR CHORADIA
2040, Vijayvargia Complex, Ground Floor
Pitalio Ka Chowk, Johari Bazar, Jaipur-302003
Mobile : 098293-20571
e-mail : abtypyd@gmail.com

नोट : किसी भी प्रकार की पूछताछ व शिकायत के लिए :—
फोन करें : 011-23210593 या E-mail : suggestion.abtyp@gmail.com पर ई-मेल करें।
पता : अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद्, 210, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-110002

B. C. JAIN (BHALAWAT), FCA, ACS, ICWA
Director

SUNRISE
HOUSING CONSTRUCTIONS LTD.

Sunbeam Chambers, Ground Floor, New Marine Lines,
Opp. Liberty Cinema, Mumbai 400 020 India
Tel. No.: 022-22096000/ 1/ 4 Fax: 022-22095000
Mobile: 09821117813 Email: cabcjain@gmail.com

D.P. Regd. No. DL (c)-01/1271/2015-17
Regd. No. R.N.I. 25988/73
Date of Publishing : 25th September 2017
Posted at New Delhi PSO Dt. 01-02 Every Month

Shri SohanlalJi, Meghraj, Ajit Dhakad (Sisoda)

अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद् के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक- बी.सी. जैन (भलावत) द्वारा जे.के. ऑफसेट, 17, डी.एस.आई.डी.सी. रोहतक रोड, नांगलोई, दिल्ली से मुद्रित तथा 210, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-2 से प्रकाशित। सम्पादक-बी.सी. जैन (भलावत)